शतरंज के मुहरे

लेखक
"जयनाथ 'नलिन'"

प्रकाशक
अवध पब्लिशिंग हाउस,
लखनऊ

मुद्रक
पं० सूरजराज मानव
मानव-प्रिंटिंग-वर्क्स, लखनऊ

संकेत

प्रकाशनक्रम से "शतरंज के मुहरे" मेरी हास्य-व्यंग्य की रचनाओं में तीसरी है और हिन्दी-साहित्य में अपने ढंग की सबसे पहली। अभी तक हिन्दी में 'व्यंग्य-शब्द-चित्रों' [Satiric Sketches] की कोई भी पुस्तक मेरे देखने में नहीं आई। कुछ स्कैच लिखे अवश्य गये हैं, वे जातिवाचक हैं, व्यक्तिवाचक नहीं। पं० हरिशंकर शर्मा की हँसोड़ लेखनी ने सम्पादक, लीडर, पुजारी, महन्त आदि के सफल व्यंग्य-शब्द-चित्र अंकित किये हैं, पर विशेष व्यक्तियों के शब्द-चित्र अभी तक प्रकाशित नहीं हुए। मेरा तात्पर्य हास्य-व्यंग्यात्मक शब्द-चित्रों [Satiric Sketches] से है। अंग्रेज़ी में गार्डनर महोदय के दो स्कैच-संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। उनमें चुटीला व्यंग्य और चरित्र प्रकट करने का कलापूर्ण कौशल तो ख़ूब मिलेगा; पर हृदय की चुटकी लेनेवाला हास्य बहुत कम। वे स्केच सर्वश्रेष्ठ 'चरित्र-चित्रों' में हैं; इसमें तनिक भी सन्देह नहीं।

इस पुस्तक में ऐसे ही 'महापुरुषों' के शब्द-चित्र दिये गये हैं, जो किसी-न-किसी रूप में धरातल के उभरे हुये स्तम्भ हैं। कुछ साहित्य-

पुरुष भी पुस्तक में रखे गये हैं। मैं तो इसे पुस्तक की विशेषता मानता हूँ, पाठक चाहें, तो न भी मानें। साहित्यिकों [विशेषकर हिन्दी लेखकों] के प्रति उपेक्षाभाव को मैं निन्दनीय समझता हूँ। हाँ, 'किसके विषय में क्यों लिखा गया और किसके विषय में क्यों नहीं ?' ये प्रश्न नहीं किये जायँ, तो अच्छा है।

"शतरंज के मुहरे" में जिनके व्यक्तित्व चित्रित किये गये हैं, उनका मैंने निष्पक्ष ईमानदारी से गहरा अध्ययन किया है। उनके व्यक्तिगत सम्पर्क में आने और उनको ठीक-ठीक पढ़ने का मेरा सजग प्रयत्न रहा है। मैं जिनके सम्पर्क का लाभ न उठा सका, उनके विषय में उनके निकटस्थ निष्पक्ष व्यक्तियों से मालूम किया। सबसे अंत में ही, विवश होकर, पुस्तकों और समाचार-पत्रों की सहायता लेनी पड़ी। अन्तर्राष्ट्रीय [विदेशी] व्यक्तियों के विषय में केवल पुस्तकें, उनके भाषण और वक्तव्य ही सहायक हो सके। पर आजकल समाचार-पत्र किसी भी सी० आई० डी० या गुप्तचर से कम नहीं। भरसक प्रयत्न रहा है कि कोई ग़लत घटना या तथ्य न आने पाये। यदि कोई काल्पनिक तथ्य आ भी गया हो, वह किसी वास्तविक चारित्रिक गुण को प्रकट करने के लिये ही आया होगा।

लिखते हुए मैं पूरी तरह सचेत रहा हूँ। इस बात का सदा ध्यान रखा है—क़लम सदा नम्र और निर्लेप रहे। हृदय को छूकर गुदगुदी तो पैदा कर दे; पर छिछलापन न आने पाये। रेखायें गहरी और साफ़ हों, पर क़लम बहुत नुकीली तथा चुभनेवाली न हो जाय! साथ ही यह भी ध्यान रहा है कि व्यंग्य गम्भीर हो; पर बोझल और पीड़क न हो। यदि

मेरा सजग प्रयत्न रहते हुये भी, कहीं मेरी क़लम भटक गई हो, तो उसकी ज़िम्मेदारी से भी मैं भागना नहीं चाहता।

मेरी क़लम अपने कौशल में कितनी सफल हुई, कला का कितना चित्रण वह कर सकी, यह मैं कैसे कहूँ! पर मैं उससे अप्रसन्न या असन्तुष्ट नहीं हूँ।

समालोचकों की तीखी-मीठी आलोचनाओं का मैं स्वागत ही करूँगा।

विजयदशमी,
सान्ताक्रुज़, बम्बई

जयनाथ 'नलिन'

नायक

विषय-सूची

अन्तर्राष्ट्रीय—

१—सफ़ेद हाथी (वेवल) १
२—चिकना घड़ा (चर्चिल) १०
३—छिपा रुस्तम (स्टालिन) १७
४—ढिंढोरची (एमरी) २३
५—पिछलग्गू प्रेमिका (च्यांग काई शेक) ... २९
६—मक्खी दार्शनिक (बर्नार्ड शा) ३५

भारतीय—

७—पाकिस्तानी बादशाह (जिन्ना) ४०
८—हिसाबी नेता (पट्टाभि सीतारमैया) ... ४८
९—वर्धाव्राण्ड (राजगोपालाचार्य) ५६
१०—यह बहुरुपिया (फ़ज़लुल हक़) ६४
११—क्रान्ति का दूत (एम० एन० राय) ... ७१
१२—भाग्य का हेटा (सुन्दरलाल) ७६
१३—पंजाब की नाक (सर छोटूराम) ८२
१४—पालतू चीता (सरदार पटेल) ८९

साहित्यिक—

१५—आम बिना रस का (शान्तिप्रिय द्विवेदी) ... ९४
१६—कसरती कलाकार (भगवतीप्रसाद) ... १००
१७—हिंदी का चर्खा (बनारसीदास) १०७
१८—विचारकजी (जैनेंद्रकुमार) ११४
१९—हरफ़न मौला (गुलाबराय) १२१

अन्य—

२०—असल कम्युनिस्ट १२८
२१—श्रीमती सलवार १३६
२२—भविष्य का स्वप्न १४२
२३—मूँछों की मरम्मत १४७

: : सफ़ेद हाथी : :

लार्ड वेवल को हिन्दुस्तान का वायसराय बनाया जाना एक बेढब घटना है। यह घटना भारतीय इतिहास के पन्नों पर लोहे के अक्षरों में लिखी जाने लायक़ है। लोहे के अक्षरों में इसलिये कि आप उन दिनों यहाँ के वायसराय बनाये गये, जब दुनिया में लोहे से लोहा बज रहा था। और आप भी लोहा बजाने की कला में पूरे उस्ताद माने जाते हैं। भाग्य चेतता है तो ऐसे, जैसे हिन्दुस्तान का चेता। जब परमात्मा देता है, तो छप्पर फाड़कर। नहीं तो इतना सही शासक खोजने पर भी मिलना मुश्किल है। यह तो इन अंग्रेज़ों का ही कलेजा है, जो हिन्दुस्तान की रोटी जैसी मामूली चीज़ छीनकर उसे सभ्य बनाने के लिये पागल रहते हैं और अपने प्यार दुलार से पले पूतों (सु या कु ?) को यहाँ भेजते रहते हैं।—ख़ैर।

इस महँगाई के ज़माने में लार्ड वेवल जैसा वायसराय मिलना मुश्किल ही नहीं, असम्भव है। वायसराय तो बहुत बड़ा और क़ीमती आदमी होता है, आजकल तो कुली-मजूर भी आते हुये सौ-सौ नख़रे दिखाते हैं और मजूरी भी दस गुनी माँगते हैं। इतना सब-कुछ होते हुए भी लार्ड वेवल पुराने बाज़ार-भाव पर आये हैं—उसी फ़िक्स रेट पर तशरीफ़ लाये हैं। न महँगाई-भत्ता, न लड़ाई का बोनस और आदमी सरासर फ़िट—लाखों

में छँटे हुए। सच, अगर हिन्दुस्तान की भलाई के लिये गोरे प्रभु इतने बावले न बने होते तो कहा नहीं जा सकता कि वायसराय को किस ब्लैक-मार्केट से ख़रीदना पड़ता और न जाने कितना पैसा नष्ट करना पड़ता! लार्ड वेवल ब्लैक मार्केट से नहीं, व्हाइट मार्केट से आये हैं— इंगलैण्ड में ब्लैक-मार्केट भला कहाँ! गोरों के घर में तो सफ़ेद बाज़ार ही होगा।—ख़ैर।

आज तक इंगलैण्ड ने इतना सही, हरपहलू उचित, हर दिशा में उपयुक्त शासक नहीं भेजा। बी-बरतानिया धीरे-धीरे यह समझी कि हिन्दुस्तान कैसा देश है। इसलिये बड़ी कोशिशों और प्रयोगों के बाद वह ऐसा सपूत पैदा कर सकी। आज तक जितने भी वायसराय यहाँ आये, माना कि वे सभी बी-बरतानिया की कोख की करामात के आदर्श उदाहरण हैं, फिर भी उनमें एक-आध कमी ज़रूर रह गई। वेवल साहब में वे सभी कमी पूरी हो गई हैं। लार्ड वेवल हिन्दुस्तान के लिये सबसे ज़्यादा सही वायसराय हैं। सुनिये—

हिन्दुस्तान एक पुराना देश है। यहाँ पुराने आदमियों की बड़ी पूजा होती है। अतीत के लिये हिन्दुस्तानियों के हृदय में भोंदू भावुकता भरी पड़ी है। वायसराय भारतीय पौराणिक पुरुष दानवगुरु एकाक्षी श्रीशुक्राचार्य के प्रतिनिधि हैं। शुक्राचार्य ने दानवों के हित के लिये एक आँख का त्याग किया था और आपने भी एक आँख को तिलांजलि दे दी। दोनों ही सेना-संचालन में प्रसिद्ध हैं। आपको देखकर राणा साँगा सामने आ जाते हैं। आपके दर्शन करते ही राजा रणजीतसिंह का ध्यान आ जाता है। इतना ही नहीं, हिन्दी के प्रसिद्ध सूफ़ी कवि मलिक मुहम्मद जायसी भी

आप में मिल जाते हैं। मतलब यह कि इन सभी महापुरुषों को परमात्मा ने एक आँख से देखने का वरदान दिया था।

लार्ड वेवल में श्रीशुक्राचार्य विराजमान हैं, इसलिये पुराणभक्त पोंगापंथी आपसे प्रेम अवश्य करेंगे। आप में राणा साँगा समाये हैं, फिर राजपूत आप पर निछावर क्यों न हों। आपकी आँखों में रणजीतसिंह झाँक रहे हैं, तो सिख आपके साथ निश्चय ही रहेंगे। आपके चोले में जायसी अपना जलवा दिखा ही रहे हैं, भला हिन्दी-कवि क्यों न आपके नाम पर लट्टू हो जायँ। अब किसकी मजाल है, जो इनके रूप की उपेक्षा करे। हो सकता है, अज्ञान के कारण लोग इनकी महत्ता न पहँचानें, पर जीवन-मुक्त होने के बाद तो इनका गान गाया ही जायगा। महापुरुष जीते जी कम पूजे जाते हैं, ऐसा कुछ रिवाज है।—ख़ैर।

भारतवर्ष में सैकड़ों धर्म मतपंथों का जमघट है। हिन्दू-मुसलमान, बौद्ध-जैन, सिख-ईसाई, पारसी—अनेक धर्म, अजगर की तरह आराम से हाथ-पैर फैलाये पड़े हैं। ज़रा इनको छेड़ा कि जान आफ़त में। यही नहीं, कहीं कर्वट लेते-लिवाते भी अगर किसी का हाथ-पैर किसी से छू गया तो इनकी औलाद कट-मरने को तैयार। इस वास्ते यहाँ तो समदर्शी शासक चाहिए। जो सबको एक आँख से देखे। महारानी विक्टोरिया के ऐलान का सच्चे रूप में पालन करे। लार्ड वेवल सबको एक ही आँख से देखते हैं। पक्षपात को स्थान कहाँ! आप पर धोखे में भी सन्देह नहीं किया जा सकता कि आपने कभी हिन्दू-मुसलमानों को दो आँखों से देखा।

देखा क्या, कभी देखना ही न चाहा। यहाँ आने से पहले ही आपने अपने को यहाँ के योग्य बना लिया। कभी अपनी प्यारी प्रजा को दो आँखों

से देखना पड़ जाय, इसलिये एक आँख का सदा के लिये त्याग ही कर दिया। आँख फूटी, पीर गई। न दो आँखें रहेंगी, न अपनी प्यारी प्रजा को दो आँखों से देखने की नौबत आयगी। न रहेगा बाँस, न बजेगी बाँसुरी। तो आप स्वप्न में भी कभी दो आँखों से नहीं देख सकते।—ख़ैर।

त्याग के तो आप साकार रूप हैं। जीवन के हर खण्ड में त्याग ही त्याग। वायसराय होने से पहले आप पूर्वी युद्ध-मोर्चे के प्रधान सेनापति थे। वहाँ भी आपने राज्य का त्याग किया। सिंगापुर को आप बात की बात में त्यागकर चले आये, फिर भी नादान शत्रु पर इस त्याग का कोई प्रभाव न पड़ा। उसका लालच और भी बढ़ गया। मोह-जाल में फँसे, अज्ञान के अंधकार में डूबे शत्रु के ज्ञाननेत्र खोलने के लिए आपने दूसरा महान् त्याग किया। मलाया-बर्मा जैसे प्रदेश को भी ठुकरा दिया।

ले, मूर्ख शत्रु, तू इस मायाजाल में फँसा आवागमन के चक्कर में छटपटाता रह। लार्ड वेवल-जैसे जीवनमुक्त वीतराग को इन सब झंझटों से क्या लेना-देना। पर यदि अब भी तेरी अक्ल पर पड़ा ताला टूट जाय, तेरे अज्ञान के कपाट खुल जायँ और तेरी आत्मा की कोठरी में परमात्मा घुस बैठे तो लार्ड वेवल का त्याग तमाशा न बने, वह कामयाब हो। लार्ड साहब को अपने त्याग पर सन्तोष हो।

त्याग चले रघुनाथ निर्शंक है, बाप को राज बटाउ की नाईं।

श्रीरामचंद्रजी भी तो अपने बाप राजा दशरथ का राज 'बटाउ' की नाईं त्यागकर चल दिये थे। आपने भी दुनिया को बता दिया कि हम भी रघुनाथजी से कम त्यागी नहीं। इतने बड़े राज्य को बात की बात में ठुकरा सकते हैं। सिंगापुर, मलाया, बर्मा का ऐसा त्याग किया कि

दुनिया भौंचक्की रह गई। इतने बड़े त्याग के लिए कलेजा चाहिए। लोग तो एक एक गज़ ज़मीन पर सिरफुटव्वल करते हैं, यहाँ माथे पर बल भी न पड़ने दिये।

मारते का हाथ भले ही पकड़ लिया जाय, कहनेवाले की ज़बान नहीं पकड़ी जाती। कई मुँहफट लोग कह सकते हैं कि राम तो अपने बाप का राज त्यागकर चले गये थे। इनके क्या बाप का राज था, जो इनको मोह-ममता होती! कुछ लोग कह सकते हैं कि यह त्याग नहीं, इनकी कायरता है। इन लोगों को समझ लेना चाहिए कि यह सब कुछ बकवाद है। वेवल साहब निश्चय ही निष्काम, निष्कलंक त्यागी हैं। कि र भी यदि ये अक्ल के दुश्मन अपनी हठ से न हटें तो इनको याद रखना चाहिए कि चन्द्रमा में कलंक उसकी शोभा ही बढ़ाता है। आपका गोरा गोरा मुखड़ा उस कलंक-कालिमा से और भी दमक उठेगा।—समझे।

इन दोष-खोजियों की बात सरासर ग़लत है। पूर्व के मोर्चे से भागना कायरता तो हो ही नहीं सकती, चाहे लार्ड वेवल ने कायरता दिखाने की कामना भी की हो। क्योंकि ज़ायक़ा बदलने के लिए कभी-कभी आदमी परिवर्तन चाहा करता है। फिर भी यह कायरता नहीं है, त्याग है। अफ़रीक़ा में आपने दुश्मनों को नाकों चने चबवा दिए थे। आपके दर्शन करते ही दुश्मनों की वह कुशगुनी हुई कि दुश्मन दुम दबाकर भागे। और ऐसे भागे कि पीछे फिरकर देखने का नाम भी न लिया।

इस प्रदेश को छोड़कर भाग आने में सैनिक समझदारी भी है। इस भाग में जंगल ही जंगल हैं। साँप-बिच्छुओं का जमघट है। सदा मलेरिया फैला रहता है। इस भाग में तो सभ्य समझदार मनुष्यों के रहने की जगह

ही नहीं। यहाँ तो जंगली जानवर ही बसते हैं। हमारे लार्ड साहब सोलह आने सभ्य हैं। फिर वह इस प्रदेश में क्यों रहें। दुश्मन हैं पूरे जंगली, असभ्य; इसलिये वे ही इस क्षेत्र में बसें। दूसरे इस प्रदेश में रह कर अपने आदमियों को ख़ामख़ा मौत के मुँह में डालने से क्या लाभ। साथ ही इस भाग पर चढ़ाई करके अधिकार जमाने का फल भी तो दुश्मनों को चखाना चाहिए। अपने आप जंगली जानवरों के शिकार होंगे और बचे-खुचे मलेरिया से मारे जायँगे। अपनी एक गोली भी न ख़राब हो और दुश्मन यमलोक पहुँचा दिया जाय। न हल्दी लगे, न फिटकरी और रंग चढ़े चोखा।

हाँ, तो लार्ड वेवल साहब ने इन लोगों से युद्ध क्यों न किया? असभ्य जंगली दुश्मनों से युद्ध करना, सभ्य और ख़ानदानी आदमी का काम नहीं। रहीमजी भी तो कह गये हैं—

लायक ही सों कीजिए, बैर, ब्याह और प्रीत।

इन तुच्छ और जंगली आदमियों से युद्ध करके अपनी बदनामी थोड़े ही करानी थी। इज़्ज़त दार आदमी का मरन है। दुनिया का मुँह तो पकड़ा नहीं जा सकता! लोग तो कह देते—लो, साहब इतने बड़े आदमी होकर किनके मुँह लगे। जब जापानी किसी बात में भी इनकी बराबरी नहीं कर सकते तो इनसे लड़ाई कैसी। इन लोगों के साथ भिड़ना सरासर हिमाक़त है। और ऐसे आदमी से क्या भिड़ना, जो न युद्ध के क़ायदे जाने, न नियम समझे। न पैंतरे बदले, न चेतावनी दे और मरने का डर किये बिना ऊपर ही चढ़ता चला आय। अन्तर्राष्ट्रीय नियम तोड़ कर लड़ने-वालों से लड़े लार्ड वेवल की बला!—समझे!

परमात्मा को वैसे सब निष्पक्ष कहते हैं; पर अक्ल का कोटा तय करते हुए आपने लार्ड वेवल की बेहद रियायत की—बहुत पक्षपात किया। आपको अक्ल का सबसे ज़्यादा 'राशन' दिया गया है। इसके अतिरिक्त विशेष मौक़ों पर ख़र्च करने के लिये 'स्पेशल परमिट' भी आपको प्राप्त है। आपकी अक्ल पर कोई कण्ट्रोल नहीं—खुले हाथों भी लुटावें, तो कौन रोक सकता है। अगर मि० चर्चिल अपनी तौहीन न समझें, तो हम निडर निश्चय से कह दें कि इस युग में वेवल साहब के पास अक्ल का सबसे ज़्यादा 'स्टाक' है।

आपने संसार को दिखा दिया है—अक्ल हो तो उससे ऐसे काम लो जैसे हमने लिया। पूर्वी युद्ध—मोर्चे से आप इस समझदारी और सफलता से पीछे हटे कि मुँह से 'वाह वाह' निकल पड़ती है। आपकी सफ़ाई को देखकर दुश्मन भी दिल ही दिल खुश हो जाता है। भले ही मुह से कुछ न कहे। आपके या आपके एक भी सिपाही के शरीर पर एक खुरच तक न लगी। घाव होने की तो बात ही क्या!

काजल की कोठरी में कैसो ही सयानो जाय!
एक लीक काजर की लागे है पै लागे है।

आप काजर की कोठरी में तो क्या, कालिमा के खत्ते में जाकर भी साफ़ बेदाग़ बाहर निकल आये। मजाल है, जो एक लकीर भी लग जाय।

नादान दुश्मन समझता था कि वह वेवल साहब को नीचा दिखा देगा। वह टापता ही रह गया और वेवल साहब घर में आ घुसे। बाल तो बाँका कर ले कोई। अरे, नासमझ दुश्मन, यहाँ तुझ-जैसे अक्ल के कोल्हू नहीं हैं। चला है, मोर्चा लगाने। कभी लड़ाइयाँ लड़ी हों, तो जाने। यहाँ

सैकड़ों सोचें लगाये हैं, दुश्मन को झाँसा देकर साफ़ निकल आये हैं। कितने ही शत्रु जी भरकर छकायेहैं और हम सफलतापूर्वक पीछे हट आये हैं।

शत्रु की मूर्खता और हेकड़ी पर ताज्जुब तो होता ही है, हँसी भी आती है। उसने समझा, वेवल साहब डरकर भाग रहे हैं। पीछा करो, जो पल्ले पड़े, वही ग़नीमत। भागते भूत की लँगोटी ही सही। वह इनकी जादूभरी अक्ल की करामात को भला क्या समझता! उसने सरासर धोखा खाया और हिन्दुस्तान में घुसने की कोशिश की। वेवल साहब तो उसे नाच नचा रहे थे। लोमड़ी को बिल से बाहर लाने के लिये बुद्धि की बाजीगरी दिखा रहे थे।

दुश्मन ने जंगली प्रदेश से बाहर मुँह चमकाया। वेवल साहब को भी जोश आया। कोई मिट्टी के बने हुये तो हैं नहीं। कोई कुर्मी-कहार तो हैं नहीं। वीर योद्धा हैं। और घर में तो चींटी भी शेर हो जाती है, यहाँ तो कमाण्डर इनचीफ़ हैं। सहने की भी कोई सीमा है। लाला, सिर पर ही चढ़े आते हैं। आ गया जोश और वेवलजी ने बाँहें चढ़ा कर ललकारा—खड़ा तो रह तेरी ऐसी की तैसी! लोमड़ी की दुम! सियार का कलेजा! डाट जो सुनी तो दुश्मन नंगे पैरों भागा! जूता पहनने तक की फ़ुरसत न मिली।

इन सब बातों से लार्ड वेवल की अक्ल और वीरता पर धुँधली-सी रोशनी पड़ती है। धुँधली-सी इसलिये कि उनके पास इतनी चमकीली वीरता और भड़कीली अक्ल है कि उसके ऊपर चाहे जितनी रोशनी डाली जाय, वह धुँधली ही पड़ जायगी।

इतना ही नहीं, आपने वायसराय की हैसियत से भी अपनी बुद्धिमत्ता

का प्रमाण दिया। पाकिस्तान का विरोध आपने अपने ऊपरी या निचले दिल से किया। शिमले में भी हिन्दुस्तानी नेताओं को बुलाकर पुराना नाटक नये सिरे से खेला। आपकी इसी समझदारी और अक्लमंदी को देख कर तात्कालिक भारतमंत्री मि० एमरी ने आपकी प्रशंसा करते हुये कहा था—लार्ड वेवल एक बुद्धिमान् हाथी हैं। हम भी मि० एमरी के स्वर में स्वर मिलाकर कहते हैं, लार्ड वेवल एक बुद्धिमान् हाथी हैं; लेकिन सफ़ेद हाथी।

: : चिकना घड़ा : :

३० नवम्बर, १९४४ से ठीक ७० वर्ष पहले इंगलैण्ड के आकाश में एक अनोखा पुच्छल-तारा चमका। ज्योतिषियों ने नये-नये अन्दाज़ लगाये, तरह तरह की भविष्य-वाणियाँ कीं। पर उस समय पता न चल सका कि बरतानिया के भाग्य में नयी बात क्या पैदा हुई! आज ७० वर्ष बाद निश्चय हो गया कि पुच्छल-तारे ने एक महापुरुष के अवतार की सूचना दी थी। सचमुच, वह दिन बी-बरतानिया के गर्भ की सफलता का शानदार पर्व था। उसी तारे के साथ एक बालक का जन्म हुआ, जिसमें उसके समान ही टिमटिमाहट थी, और उसी की तरह प्रभाव। बालक की जन्म-कुण्डली में कितने ही वेढब ग्रह-नक्षत्रों का जमघट लग गया। उस समय इस बालक के अजीब लक्षण थे और अब इसके अनोखे कारनामे हैं।

मामला यों हुआ समझिये। एक दिन बुड्ढे ब्रह्मा अफ़ीम की पीनक में ऊँघ रहे थे। खोपड़ी को ठण्डी-ठण्डी हवा लगी, कुछ होश आया और बुद्धि ने हरकत की। आपने सोचा, अगर ५०-६० वर्ष बाद कोई दुष्ट बी-बरतानिया से छेड़खानी करने पर कमर कस ले, पोप के समझाने पर भी न माने और ब्रिटिश साम्राज्य का दिवाला निकलने की नौबत आ जाय तो कौन उस आड़े वक्त में उसकी रक्षा करेगा। नशे में ऊँघते हुए ब्रह्माजी

ने ब्रह्माणी को बुलाया और तुरंत आदेश दिया—'वक्त चूका तो पछताने के सिवा कुछ हाथ न आयगा, इसलिए फ़ौरन् आदमी बनाने का मसाला, जितना भी रिज़र्व फण्ड में हो, ले आओ। आज एक महापुरुष का निर्माण करना है।' ब्रह्माणी ने बहुत समझाया कि थोड़ा-बहुत मसाला अपने पास भी रख लें, सब एक ही इन्सान के बनाने में ख़र्च करना ठीक नहीं; पर उनकी एक भी नहीं मानी गयी। ब्रह्माजी ने अफ़ीम के नशे में एक बालक का निर्माण किया। वही बालक इंगलैण्ड के प्रधान मन्त्री विण्टसन चर्चिल के नाम से संसार में प्रसिद्ध हुआ। उसी मसाले का जादू भरा असर है कि मि० चर्चिल के पास—बन्दर का भेजा और बिल्ली का कलेजा, कुत्ते का सर और गिद्ध की नज़र, भेड़िये की फुर्ती और लोमड़ी की चालाकी, भैंसे का बल और गेंडे की चर्बी—सभी कुछ पूरी पूरी तादाद में मौजूद है।

मि० चर्चिल ने जीवन की कितनी ही टेढ़ी सीधी गलियों में जूतियाँ चटकायी हैं। और देश-विदेश की धूल फाँकते फिरे हैं। अनुभव की कई महफ़िलों में आपने कितने ही धक्के खाये हैं; पर आप आदमी गुर्देवाले हैं, इसलिए धक्के खाकर भी मुस्कराते हुए लौट आये हैं। हिन्दुस्तानी सिपाहियों में रहकर आपने जीवन के आदर्श गढ़े, आफ्रिका में रहकर अक्ल का रटाक जमा किया और कञ्जरवेटिव पार्टी से अपने दक़ियानूसी दिमाग़ के लिए ख़ुराक प्राप्त की। आप अनुदारता के अवतार और खोखले ब्रिटिश अभिमान के भाण्डार हैं।

चरित्र में वी-बरतानिया के सच्चे सपूत, स्वभाव में साम्राज्यवादी बिल्ली, करतूतों में चिकने घड़े और राजनीति में आप तोताचश्म हैं। बड़ी चौड़ी

क़िस्मत साथ लाये हैं। सैनिक से सम्वाददाता, सम्वाददाता से पार्लमेण्ट के सदस्य और सदस्य से साम्राज्य के शासक—प्रधान मंत्री। तरक्की के रास्ते में लद्दू टट्टू की तरह नहीं, सवारी के ख़च्चर की तरह चाल चली है आपने। समय-समय पर वह पैंतरा काटते हैं कि दुश्मन का दम फूल जाता है।

इस बुड्ढी बिल्ली के चाहे नाख़ून घिसकर बेकाम हो गये हों फिर भी पराधीन देशों और उपनिवेशों को चूहों की तरह अपने ख़ूनी पञ्जों में दबाये रखना चाहती है। साथ ही अन्य पूर्वी देशों के बाज़ारों का मक्खन चाटकर ज़ायक़ा सुधारने का भी मौरूसी हक़ रखती है। मि० चर्चिल को दिवालिया सामन्तशाही का सदा अभिमान रहता है। जानबुल की मुर्दा शान का सदा ध्यान रहता है। साम्राज्य का कहीं दिवाला न पिट जाय, यह आशङ्का भूत बनकर सिर पर सवार रहती है। पराधीन देश कभी सिर न उठायें, इसके लिए आप साँप की तरह सतर्क रहते हैं।

बकनेवालों को बकने दो, कान में उँगली डालकर बैठ जाओ, यही आपकी राजनीति है। विरोधियों की बातों को तेज़ चुरुट की तरह पी जाते हैं और खिसियाहट के धुएँ की आड़ में अपनी आबरू बचाते हैं। जब बकनेवालों की आवाज़ कानों को छेदने लगती है तब आप गीदड़-भबकी का सहारा लेते हैं। विरोधियों पर ललकार कर हमला करते हैं। जो लोग इनको जानते और पहचानते हैं, वे इन घुड़कियों से न डरकर और भी जली कटी सुनाते हैं। ऐसे आड़े वक्त में मि० चर्चिल की चेष्टा देखने लायक़ होती है। खिसियाया मुँह हूबहू उतरे हुए अचार सा शोभा देता है। तब भी काम नहीं चलता, तो मि० चर्चिल चिड़चिड़ाकर बहकना शुरू कर देते हैं। मिचमिची आँखें, गोल गप्पों से गाल, साँप की बाँबी-जैसा मुँह

और उसमें फन पटकती हुई घायल सर्पिणी जैसी जिह्वा ! चाहते हैं, एक ही फुफकार से विरोधियों को भस्म कर दें ; पर साँप खिलानेवाले सँपेरे भला कब डरने लगे !

कुल मिलाकर मतलब यह कि विरोधी लोगों की बौछारों का घड़ों पानी चाहे आप पर पड़े पर यहाँ एक बूँद भी नहीं ठहरती। यह बात नहीं, जिसकी उतर गयी लोई, उसका क्या करेगा कोई। एम० पी० सोरेनसेन ने कितनी ही बार जली-कटी सुनायी, पर इस कान सुनी, उस कान निकाल दी। एक बार एच० जी० वेल्स ने तो यहाँ तक कह डाला कि श्रीमान्‌जी, सम्मानसहित पार्लमेण्ट से बिस्तर गोल कर लें। न आपको समय के समाज का और न प्रकृति का ही ज्ञान है। वेल्स साहब के शब्द निश्चय ही अपमानजनक हैं। यह मि० चर्चिल का ही कलेजा है कि सह गये, और कोई होता तो मानहानि का दावा कर देता।

बी-बरतानिया के आप सच्चे सपूत हैं। उसकी सतीत्व-रक्षा की चिन्ता में ही घुल-घुलकर आप फूलते-फूलते कुप्पा होते जाते हैं। उसकी तरफ़ कोई आँख उठाकर तो देखे कि मि० चर्चिल उसे कोल्हू में न पेरवा दें, तो कहना। हिटलर चला था बी-बरतानिया से छेड़खानी करने। श्री चर्चिल के जीते जी एक ब्रह्मचारिणी पर हाथ डालने की हिम्मत ! मि० चर्चिल ने आव देखा न ताव, दिन देखा न रात, न सोचा सर्दी-ज़ुकाम, न किया आराम, न मुक़ाम और कभी स्टालिन और कभी रूज़वेल्ट से वह साटगाँठ की कि हिटलर की हेकड़ी दुम दबाकर भागी। हिटलर को मुँह की खानी पड़ी और मारे शर्म के वह तो मर ही गया।

राजनीति में जो आदमी आपसे कुछ चाहता है, वह सरासर धोखा

खाता है—सिर पीटता और पछताता है। जो पराधीन देश आपसे कुछ पाने की आशा रखते हैं, उनकी आस्था पर सचमुच तरस आता है। जो आपकी ईमानदारी को जानते हैं, उनसे तो क्या कुछ कहना। जो नहीं जानते, उनके लिये मि० चर्चिल की ईमानदारी की एक ऐतिहासिक कहानी कह दें।

प्रीटोरिया (दक्षिण अफ्रिका) के एक नाई के आप अब तक क़र्ज़दार हैं। बोअर युद्ध में चर्चिल साहब क़ैदी बना लिये गये थे। उन्हीं दिनों आपने एक नाई से बाल कटवाये थे, जिसके ५ शिलिङ्ग अभी तक आपने नहीं चुकाये। उस नाई का सगा भाई आज भी अपने खाते में मि० चर्चिल का नाम लिखे हुए है। ज़माना बीत गया, लेकिन चर्चिल साहब ने क़र्ज़ चुकाने का नाम न लिया। नाई ने तो मि० चर्चिल की हजामत क्या बनायी चर्चिल साहब ने ही उसकी हजामत बना दी। ऐसे ईमानदार आदमी से जितनी आशा की जाय, थोड़ी है।

आपकी धोखेबाज़ी पर आपको बधाई देनी पड़ती है। अपने जीवन में आप सिर्फ़ २६ बार मौत को धोखा दे चुके हैं, दुर्घटनाओं को घता बता चुके हैं। यमदूतों को छका चुके हैं। जब आप चार वर्ष के थे तो छज्जे से ऐसे गिरे कि आपका मस्तिष्क हिल गया। कई दिन बेहोश पड़े रहे; लेकिन मौत से साफ़ बच गये। बीच बीच में न जाने कितने मौक़े मरने के आये, पर आप मौत को लाल झण्डी ही दिखाते रहे। १९४०-४१ में लन्दन पर जर्मन बमवर्षा हुई। आपके मकान पर बम गिरा। जनाब भोजन कर रहे थे। बारह आदमी तो यम के घर में जा घुसे, लेकिन चर्चिल साहब मज़े में रोटियाँ चबाकर जुगाली करते रहे। १९४५ में यूनान में

आप पर गोली चली, पर यहाँ तो कौए का मांस खाकर उतरे हैं। गोली अपने आप बचकर निकल गयी।

मि० चर्चिल जिसे चींटे की तरह चिपट जायँ, उसको कभी छोड़ेंगे नहीं। बुरियों को ऐसे चिपटे कि उनका दम निकलने पर भी नहीं छोड़ा। अमेरिका को ऐसे चिपटे कि उसे युद्ध में घसीट ही लिया। हिन्दुस्तान को ऐसे चिपटे कि लाख हाथ-पैर पटकने पर भी छोड़ने का नाम नहीं लिया। उसके बदन में ख़ून हो या न हो; पर जब तक दम में दम है, उसे नोच-नोचकर खाये ही जायँगे।

विरोधी लोग आपको चाहे स्वार्थी, प्रपञ्ची, अनुदार, कुछ भी कहें पर आप पर कुछ असर नहीं होता। अपने जन्म के दिन से ही आपने इङ्गलैण्ड की सेवा का पट्टा लिखा लिया है, और कभी भी दूसरे लोगों की बातों में आकर या गालियों से घबराकर आप सेवा कार्य नहीं छोड़ सकते। यहाँ तो सदा असर प्रूफ़ पहने रहते हैं।

एच० जी० वेल्स ने आपका अपमान किया और अक्ल का दिवालिया बताया, पर आप टस से मस न हुए। सोरेनसेन ने आपको ख़ूब तानों के तीर मारे, पर आपकी ढिठाई का कवच ज़रा भी न फटा। कितने ही अमेरिकन पत्रों ने आपको जली-कटी सुनायी, पर जनाब धार पर डटे रहे। भारत कितना ही चिल्लाये, गिड़गिड़ाये या धमकाये; पर यहाँ पिघलना नहीं जानते। रात दिन जिसको अपनी अम्मीजान बी-बरतानिया की सेवा का ध्यान है, वह इन व्यर्थ की बातों बकवासों से क्या डगमगायेगा। यहाँ तो उसके घावों पर मरहम लगाने से ही अवकाश नहीं मिल पाता।

पाइपसिह चौबीस घण्टे आठ पहर मुँह के दरवाज़े पर धुआँ उड़ाते हुए पहरा देते रहते हैं। और इसी धुएँ में कितने ही भेद रास्ता भूल जाते हैं—इसी में ग़ायब हो जाते हैं।

स्टालिन है बड़ा गुरुघण्टाल, पर बिल्कुल गुम-सुम। बड़ा काइयाँ कूटनीतिज्ञ है, पर चुप्पा। पैंतरा बदलने में एक ही उस्ताद है, पर बिल्ली-जैसा ख़ामोश। छिपा रुस्तम है—छिपा रुस्तम। मतलब यह कि मुँह तक ठूँस-ठूँसकर भरे अचार के घड़े की तरह! चाहे जितना हिलाओ-डुलाओ, कोई आवाज़ न आयगी। अन्दर का कुछ पता नहीं चल सकता, मिर्चें भरी हैं या सेब का मुरब्बा!

लेनिन के बाद जब दुनिया ट्राट्स्की का नम्बर समझती थी तब स्टालिन की अँधेरी मूँछों की छाया में शरारत भरी आत्मविश्वासी मुसकान खेला करती थी। पाइप पड़यंत्र भरा धुआँ उड़ाया करता था। और माथे पर धूर्तता भरी सरवटें रेंगा करती थीं। स्टालिन ने दुनिया को बता दिया, मोंदुओ, तुम जो सोचते हो, वह होगा नहीं। लाल रूस ने ट्राट्स्की को धता बताई, स्टालिन की हस्ती गले लगाई। ट्राट्स्की ने भी बड़े बड़े अस्त्र चलाए, पर स्टालिन ने सभी काट गिराये। उसे जहन्नुम रसीद किया, आप गद्दी पर विराजा।

स्टालिन को राज मिला। जानबुल का कलेजा काँपने लगा, दिल में धुँआ उठना शुरू हुआ, अंकिल शाम की अफ़ू चकराई और ब्रह्मचारिणी बी-बरतानिया, आँखें चमका, ओठ पिचका, ठोढ़ी पर उँगली रखकर बोली—यह मज़ूरवा राज करेगा। मेरी शान पर बट्टा! इन घसियारों के हाथ में हुकूमत।

ब्रह्मचारिणीजी ने स्टालिन को कोरी कोरी सुनानी शुरू कीं, ख़ूब कीचड़ उछाली, धूल उड़ाई, रंग-बिरंगा पानी डाला। पर यहाँ तो ठहरे असर प्रूफ़! स्टालिन मन ही मन हँसता रहा—क्या हुआ, भाभियाँ देवर के साथ ऐसी प्रेम-भरी शरारत किया ही करती हैं। उसने समझ लिया, ब्रह्मचारिणी बरतानिया होली खेल रही है। विश्वास के साथ स्टालिन दिल में कह रहा था—अरे भाभी, एक दिन दौड़ी आओगी और कलेजे से लगकर दिल की तपन बुझाओगी! तब कहना, तुम्हारे देवर में जादू का असर है या नहीं। वह दिन भी आ गया। हिटलर की हरकतों से तंग आकर बी-बरतानिया स्टालिन के पास दौड़ी गई। उसने भी कसकर कलेजे से लगाया। बी की सूखी नसों में प्रेम-भरी वेदना का रस दौड़ गया। वह प्रेमोच्छ्वास छोड़ती हुई बोली—आह देवर, तुम कितने अच्छे हो! स्टालिन ने एक आकुल चुम्बन लेकर कहा—भाभी! और जानबुल को समझाते हुए स्टालिन बोला—तुम्हें कोई इनकार न होना चाहिए, दोनों के प्यार से ही संसार का भला है।

ख़ैर!

स्टालिन राजनीति में एक भूल-भुलैया है। बड़े बड़े राजनीतिज्ञ घाघों को चक्कर खिला देता है। फ़िनलैण्ड में हिटलर ने धोखा खाया और घुस गया बेपूछे इसके घर में। कम्बल के धोखे में रीछ को पकड़ बैठा। समझा था, कोई भोंदू मजूर है, यह निकला असल रूसी रीछ जो तलवों के रास्ते ख़ून पी जाता है। देश का मान और भाभी के सतीत्व का ध्यान जो रंग लाये, सो थोड़ा।

किसी के घर में डाका पड़े, तो अलग खड़े होकर तमाशा देखने-

वाला मूर्ख है। डाकुओं में जा मिलो और माल में हिस्सा बाँट लो, यही समझदारी है। अगर अलग होकर तमाशा देखा तो माल-मता हाथ से गया और लुटनेवाले का साथ दिया तो डाकुओं से दुश्मनी मोल ली। ऐसी मूर्खता करनेवाला स्टालिन नहीं है। फ़िनलैण्ड में हिटलर घुसा तो जनाब भी जा धमके और दोनों ने बाँट खाया। जापान पर अमरीका ने चढ़ाई की तो स्टालिन ने भी पीठ में छुरा भोंक दिया। शकल देखने से चाहे पता न चले, पर स्टालिन के पास अक्ल ज़रूर है, इससे कोई इनकार नहीं कर सकता।

लुटती दूकान और जलते मकान से जो उठाकर ले भागा जाय, वही कम है। भले ही कुछ भोंदू भाई चिंघाड़ते चिल्लाते फिरें कि यह सरासर अधर्म है। अरे ईश्वर का तो भय करो। कोई इसे नैतिक नीचता कहे या इन्सानी हिमाक़त; यहाँ घबराने लजानेवाले नहीं। रही ईश्वर के भय और धर्म-अधर्म की बात, तो श्रीमान् ईश्वरजी को तो पहले ही फाँसी लगा दी गई है और धर्म-अधर्म अफ़ीमचियों की फ़लासफ़ी है। रूस के कामरेडों को इन सब बातों से क्या मतलब।

जब स्टालिन हिटलर से गुत्थम गुत्था हो रहा था तो जापान ने पीठ में छुरा नहीं घुसेड़ा, यह थी उसकी मूर्खता! स्टालिन उसकी बेवकूफी का ज़िम्मेदार तो नहीं। जिसके पास अक्ल का थोड़ा भी स्टाक है, और उसे ख़र्च करने में बिलकुल कंजूस भी नहीं है, वह तो मौक़े से लाभ उठायेगा ही। साथ ही जापान के पास छुरा होगा ही नहीं। भई, जिसके पास तेज़ छुरा है, अक्ल है और मौक़ा है, वह तो मानेगा नहीं बिना पार किये। साथ ही मिस अमरीका और बी बरतानिया से यारी भी तो निभानी है। ऐसी नारियों से दोस्ती बार बार थोड़े ही होती है।

श्री चर्चिलजी धूर्तता में अपने को पक्के उस्ताद समझते हैं, पर स्टालिन चर्चिल का भी चचा है। यूनान, पोलैण्ड, फ्रांस आदि देशों में वह डुगडुगी बजाई कि चर्चिल भी चौकड़ी भूल गया। और यह भला-मानस एटली इसे क्या पहुँचेगा!

दो तरह के जिन्न होते हैं—एक प्रकार के तो खेल बकार जाते हैं और दूसरे प्रकार के चुप! भितल्ली मार लगाते हैं। जिस औरत के सिर ऐसा चुप गुमगुम जिन्न चढ़ता है, वह सूखती जाती है। खेले-बकारे तो ओझा भी कुछ करे कराये। स्टालिन दूसरे प्रकार के जिन्नों में से हैं। ओझा लोगों का भी सिर चकराता है। इसका असर उतारना खेल नहीं। कितने ही भारतीय युवकों के सिर पर भी यह भूत बुरी तरह सवार है—उनसे बातें करो तो काट खाने को दौड़ते हैं और बड़े-बड़े भले आदमियों को भी दुलत्तियाँ झाड़ देते हैं। कौन झाड़ फूँक करे!

बहुत से हिन्दुस्तानी जवान भी अपने को स्टालिन का गोद लिया बेटा ही मानने में शान समझ रहे हैं। हिन्दुस्तान की बात छोड़कर रूस के गीत गाते हैं और अपने को स्टालिन की जायदाद का क़ानूनी हक़दार बताते हैं। पर स्टालिन बड़ा उस्ताद है। यह भी वह बाप है जो थका माँदा होने पर गोद लिये बेटों से पैर दबवाता है लेकिन उनके सो जाने पर जलेबियाँ खुद उड़ा जाता है या अपनी नक़द औलाद को ही खिलाता है। फिर भी स्टालिन की अक़्ल की तारीफ़ ही करनी पड़ती है कि न देना, न लेना और मुफ़्त में गीत गवाना!!

जब राजनीतिक मित्र-सम्मेलनों में स्टालिन पहुँचता है, तो खोया-खोया सा मालूम होता है। लगता है कि किसी बावले को पकड़ लाये।

जब चर्चिल, एटली, ईसनहावर, मौण्टगुमरी के साथ चाल दिखाता है तो विदूषक-सा लगता है। किसी फ्रेंच और इंगलिश लड़की से हाथ मिलाता है, तो उनकी अदाओं की एक पाई भी क़ीमत नहीं चुकाता। हृदय में उपयोगितावाद की धड़कन भले ही बजती हो; पर बाहर से उदासीन मालूम होता है। मास्को में अपनी मेज़ पर बैठकर पाइप पीता है, तो उसके धुएँ की तरह संसार भर में कम्युनिज़्म फैल जाने की रंगीन तस्वीर नज़र आती है। अमरीकन-अंग्रेज़ दोस्तों के साथ चाय पीता है तो सारा कम्युनिज़्म भूलकर शाही शान अनुभव करता है।

शरीर मोटा होता जा रहा है—बुद्धि की भगवान् मार्क्स रक्षा करे! पेट आगे निकला चला आ रहा है, उसमें महत्वाकांक्षाएँ समा नहीं पा रही हैं। सौ बात की एक बात—राजनीति में स्टालिन गूँगी ननद की तरह है बोलती-चालती कुछ नहीं; पर भाभी को दो रातें भी सुख से बिताने नहीं देती।

: : ढिंढोरची : :

ब्रिटिश पार्लमेण्ट में सबसे कम आकर्षक और सबसे ज़्यादा मामूली इस आदमी को आप जानते हैं ? यह है—भारत मंत्री मि० एमरी। मैसर्स चर्चिल एण्ड को० में जनाब भी एक हिस्सेदार हैं और 'बोर्ड ऑव डाइरेक्टर्स' में आप भी एक डाइरेक्टर हैं। आपका पूरा नाम है—लियोपोल्ड चार्ल्स मौरिस स्टेनेट एमरी। जितना बड़ा आपका नाम है, उससे ज़्यादा बड़े आपके कारनामे हैं।

आपकी हठधर्मी हेकड़ी में बदल चुकी है। सभी काम कट्टरता के शानदार उदाहरण हैं। कठोरता आपके व्यक्तित्व की जान है और अनुदारता आपके चरित्र की पहचान है। प्राचीनता की क़ब्र की आप आस्था से पूजा करते हैं और नवीनता की वाटिका में सैर करते हुए डरते हैं। अपनी जनूनभरी कट्टरपंथी से एक इंच भी आगे आप नहीं सरकते और उदारता की रोशनी की ओर एक इंच भी नहीं बढ़ते। आप एक भी नई बात सीखने और एक भी पुरानी बात भूलने को तैयार नहीं। आपके अनाकर्षक चौड़े चेहरे से जीवन में रसीली घटनाओं का अभाव तो प्रकट होता ही है, साथ ही दमन और सख़्ती का भी एलान वह चेहरा करता है। कठोर और ठुके हुए सिर में अंधविश्वास और लँगड़ी बुद्धि

ठोक ठोक कर भरी है। पतली और आभाहीन आँखों से बदला लेने को प्रवृत्ति प्रकट होती है। मुख पर हँसी का सदा अभाव रहता है और वह ऊसर कठोर टीले की तरह रूखापन प्रकट करता है। नाक के मध्य से गालों पर खिंची हुई और मुंह के दोनों सिरों को छूनेवाली गहरी रेखाएँ कर्मों की कठोरता की दो पगडण्डी हैं।

छोटे छोटे आपके पैर हैं और गठा हुआ शरीर है। मालूम होता है जैसे आप कुशल जंगली शिकारी हों। शिकारी आप हैं और मौक़ों का बड़ा अच्छा शिकार करते हैं। शत्रुओं पर गालियों की गोलियाँ आप बड़ी फ़ुर्ती से चलाते हैं। पैर आपके छोटे हैं, इसलिए यदि आप प्रगतिशील उदार विचारों के रास्ते में चलने में असमर्थ रहें, तो आपका क्या दोष! मि० एमरी का विलक्षण व्यक्तित्व इङ्गलैण्ड की मुर्दा सामंतशाही का खण्डहर है। फिर भी उसमें प्राचीन अकड़ और हुकूमत का मसाला काफ़ी तादाद में मिल जायगा।

मधुरता और सरसता के आप जानी दुश्मन हैं। मीठा कभी खाते नहीं। ज़बान में फिर कहाँ से मिठास हो। छछूँदर की आवाज़ की तरह आपकी बोली कानों में चुभती है। वाक्पटुता आपके हिस्से में आई नहीं। कल्पना को आपकी बुद्धि ने कभी जगह नहीं दी और प्यार भरी प्रकृति आपको मिली नहीं। इस मामले में एमरी साहब अपना अपराध नहीं मानते। क़ुदरत की कंजूसी कि उनके लिए उसका दिवाला निकल गया।

इन गुणों से जनता का ध्यान खींचा जाता है। पर मि० एमरी ने जनता का ध्यान खींचने का मौलिक ढंग निकाला और उससे आपकी ओर जानबूझकर उदासीन रहनेवालों का ध्यान सहसा खिंच जाता है।

यही गुण आपके चरित्र का सबसे बड़ा आकर्षण है। आप लड़ाकू तबियत के आदमी हैं और जब तब मुक्केबाज़ी या धौलधप्पा करने से नहीं चूकते।

एक बार मि० बुकानन ने आपको आपके किसी वाक्य के उत्तर में ख़ानाबदोश कह दिया। सह जायँ तो फिर एमरी साहब ही क्या! आप तुरन्त प्लेट फ़ार्म से उतरे और उनसे कहा—संभल जाइये। और बड़ी फ़ुर्ती से एक घूँसा उनकी नाक पर धर दिया। सब सदस्यों का ध्यान आपकी ओर खिंच गया। ये तरकीबें हैं नाम कमाने की! बदनाम भी होंगे तो क्या नाम न होगा।

बदला लेने की भीषण भावना का गर्म ख़ून आपकी नसों में चक्कर लगाया करता है और शत्रुओं की ख़बर लेने का पागलपन, विरोधियों को जली-कटी सुनाने का जनून आपकी खोपड़ी में हरकत करता रहता है। पराजित कमज़ोर शत्रु पर मि० एमरी हाउण्ड डॉग की तरह तेज़ी से झपटते हैं। बराबरवाले का बुलडॉग की तरह जोश के साथ मुक़ाबला करते हैं और विजयी विरोधी से हारकर घर में जा घुसते हैं और चौखट पर खड़े होकर टॉमी की तरह भौंकते हैं। क़ाफ़िला अपनी राह चला जाय, भले ही उसका कुछ बिगाड़ा न जा सके, लेकिन भौंकनेवाला बाज़ नहीं आता। कर्तव्य-पालन की इतनी भावना तो होनी ही चाहिए। और यह भावना मि० एमरी की रग-रग में रमी हुई है।

१८७३ में गोरखपुर में आपका जन्म हुआ। गर्भ में आते ही हिन्दुस्तानी नमक आपके हर तत्व में समाया। हिन्दुस्तान का नमक आपने खाया है। और इस नमक का सम्बन्ध भी आप ख़ूब निभाते हैं—पेट भरकर नमकहलाल करते हैं। हिन्दुस्तान आपकी जन्मभूमि है, इसीलिए

भारत मंत्री बनकर उसकी सेवा करने के लिए आप सदा दीवाने रहते हैं। भारत हाथ से निकल गया, तो सेवा करने का मौक़ा गया। इसलिए उसे सदा ग़ुलाम बनाए रखने के आप कट्टर हिमायती हैं। कांग्रेस मि० एमरी से उनकी जन्मभूमि भारत की सेवा करने का मौक़ा छीन लेना चाहती है। इसलिए आप उसको हमेशा पानी पी-पी कर कोसते हैं।

कहते हैं, बड़े आदमी जन्म से ही विलक्षण होते हैं। उनकी उत्पत्ति भी दुनिया के और दूसरे आदमियों से निराली होती है। जन्म से बालक का बड़प्पन झलक जाता है। मि० एमरी भी जन्म से ही अनोखापन साथ लाये हैं। इस पूत के पैर भी पालने में ही दीख गये थे। आपकी माता एक हंगेरियन यहूदी थी और बाप थे पक्के अंग्रेज़ ईसाई। ईसाई और यहूदी दो धर्मों के मिश्रण तथा ब्रिटिश और हंगेरियन दो गर्म ख़ूनवाले प्रेमियों के प्रयत्न से आपका निर्माण हुआ। हिन्दुस्तान की मिट्टी पर आप प्रकट हुए और यहीं आपने पहली बार अन्न ग्रहण किया। धार्मिक, राष्ट्रीय और भौगोलिक सभी रूपों में आप वर्णसंकर हैं। आपके पिता चार्ल्स एफ़० एमरी जंगल विभाग में नौकर थे। पिता के साथ आप बचपन में जंगलों में ख़ूब घूमे। इन्हीं जंगली गुणों को आपने गले लगाया। हंगेरियन यहूदी माता की सुन्दरता की छाया भी आप पर न पड़ी। यद्यपि आपका जन्म प्रेम का सफल सक्रिय परिणाम है, फिर भी प्रेमी जैसी चीज़ आपके जीवन में न झाँकी। कहीं अंग्रेज़ होने में लोगों को आप पर शक न हो, इसलिए मा का कोई भी गुण आप अपने पास नहीं फटकने देते।

आप ठोस राष्ट्रीय अंग्रेज़ हैं। और रात दिन राष्ट्रीयता का नगाड़ा इतनी तेज़ी से बजाते रहते हैं कि किसी को आपके विदेशी होने की चूँचूँ

सुनाई तक नहीं दे सकती। ब्रिटिश साम्राज्यशाही के आप प्रसिद्ध ढिंढोरची हैं। उसकी शान का गौरवगान करनेवाले चतुर चारण हैं। ब्रिटिश साम्राज्य के जेलख़ानों से भारत कहीं निकल न भागे, इसके लिए आप रात दिन जाग कर "ताला, जंगला, लालटैन सब ठीक" की आवाज़ें लगाते रहते हैं।

मि० एमरी डेमोक्रेटिक कॉमन सभा के प्रमुख अंगों में से होते हुए भी घोर फ़ासिस्ट हैं। १९३५ में आपने अबीसिनिया पर इटली के आक्रमण का समर्थन बड़े गौरव से किया। १९३७ में आपने अपने भाषण में कहा था कि ब्रिटेन को जापान-जर्मनी-इटली से शत्रुता मोल न लेनी चाहिए। रूस से भिड़ जाना ज़्यादा अच्छा है। पर जब जर्मनी का हिटलर बी-बरतानिया का चीर हरण करने लगा तो मि० एमरी बगलें झाँकने लगे। रूस से श्रीमान् एमरी साहब इतने नाराज़ हैं कि फूटी आँखों भी उसे देखना पसन्द नहीं करते। पर अपनी ही आँखों आपने बी-बरतानिया को स्टालिन की गोद में बैठकर उसे प्यार देते हुए देखा होगा तो ग़ुस्से में लाल लाल होकर रह गये होंगे। फिर भी आप ज़ब्त कर गये; वरना घूँसा सदा तैयार रहता है।

विचारों से आप पक्के फ़ासिस्ट हैं और आपने दुनिया को दिखा दिया कि फ़ासिस्ट दानव के चरणों में आपने अपना क़ीमती सपूत जॉन एमरी चढ़ा दिया है। उसने भी बाप की इज़्ज़त रख ली और रोमरेडियो से मित्र-देशों के विरुद्ध ख़ूब ज़बान की कसरत की।

मि० एमरी बड़े जीवट के आदमी हैं। अपने सिद्धान्तों पर जनूनियों की तरह मज़बूत हैं। मूर्खता भरे कार्यों की कठमुल्लों की तरह हिमायत

करते हैं। धर्मांधों की तरह अनुदार और स्वार्थियों की तरह अपने उद्धत विचारों पर क़ाबू करनेवाले हैं।

मि० एमरी बड़ी भारी राजनीतिक ईमानदारी और मानवी नमकहलाली के साथ हिन्दुस्तान की सेवा करते चले आ रहे हैं। हिन्दुस्तान के मामले में वह किसी से भी मुड़चिड़ी और मारपीट करने पर उतारू रहते हैं। वह नहीं चाहते, उनसे भारत मन्त्री का पद छीना जाय! ठीक भी है, उनकी जन्मभूमि भारत के बारे में और किसी को कुछ भी करने का क्या हक़!

इसी जन्मसिद्ध अधिकार, नमकहलाली और जन्मभूमि भारत की कमर ठोकते रहने की पवित्र भावना से मि० एमरी ने १९४५ जुलाई का चुनाव बड़े जोश के साथ लड़ा। पर हाय! भारतवर्ष का दुर्भाग्य! बेचारे एमरी साहब का नाम ग़ायब! यही नहीं, आपके इतने वोट आये कि ज़मानत भी ज़ब्त! ज़रूर किसी दुश्मन ने इनके विरुद्ध दुर्गापाठ कराया होगा। नहीं तो ऐसा कभी हो ही नहीं सकता।

अरे, अगर पार्लियामेण्ट में से निकालना ही था, तो राज़ी से ही अलग कर देते, ज़मानत तो न ज़ब्त होती। यह जले पर नमक! मेज़ कुर्सी तो छिनी सो छिनी—एक ख़ासी रक़म का चक्कू भी लग गया! सचमुच, हमें बड़ा अफ़सोस है। आपके दुःख में हम भी वैसे ही दुःखी हैं। विशेष तौर से इसलिए और भी दुःख है कि आप ऐसे गये, जैसे गधे के सिर से सींग। अंग्रेज़ों ने अपने ढिंढोरची को पार्लियामेण्ट से निकाल कर अच्छा नहीं किया। ऐसे आदमी तो साम्राज्य की शान हैं!

: : पिछलग्गू प्रेमिका : :

धर्म से ईसाई, रंग-रूप से सोलहो आने ठुके-पिटे एशियाई, गोरी चमड़ी के सौ जान से सौदाई; आपका नाम है—जनरल च्यांग काई। शेक तो एक पुछल्ला है। फ़ौजी अकड़ की तराज़ू में अभिमान के बाँटों से चीन की क़िस्मत का सौदा तोलते हैं। सुना है, जनरल च्यांग कम बोलते हैं और जब तब भी कभी मुँह की खिड़की खोलते हैं, तो दिल के दालान से बड़ी तेज़ी से बहुत-कुछ बाहर निकाल फेंकते हैं।

समय की रेगिस्तानी प्यास आपके गालों के रस को चूस गई है। गालों पर काल के गहरे चुम्बनों के निशानों की सुर्खियाँ लगी हैं। माथे पर क़िस्मत की पैंसिल कितनी ही टेढ़ी-तिरछी लकीरें खींच भागी है। ओठों को मिलानेवाली रेखा के आस-पास चीनी राष्ट्र की धुँधली उदासी खेलती है, मस्तक पर निराशा डण्ड पेलती है। कान मैडम च्यांग की मान भरी तीखी मीठी आदेशवाणी सुनने को सदा चौकन्ने और ओठ 'सरकार हुकुम' कहने के लिए आकुल! नाक कम्युनिज़्म की तेज़ाबी गंध से रातदिन परेशान है और इरादों में उसे चिनगारी के समान मसल डालने का मज़ाक़िया अरमान है। मुँह पर हवाइयाँ उड़ती हैं और सूखी आँखों में अमरीकन सहायता की आशा सुनहरी झलक बनकर मुस्कराती है।

जनरल च्यांग काई शेक देखने में काफ़ी दुबले-पतले हैं। पर आपके तनमन में आश्चर्यजनक बल है। आप पहाड़ी बकरे के समान फुर्तीले, भूटानी टट्टू की तरह मज़बूत, तिब्बती याक (बैल) की तरह लद्दू और श्रीगर्दभदेव की तरह सरल स्वभाव वेज़बान इंसान हैं।

बड़ी समझदारी और तेज़ी से आप चीनी सरकारी दफ़्तर ढो ढोकर चुंकिंग के पहाड़ी क्षेत्र में ले गये। कितने ही ऊँचे-नीचे पहाड़ों को पार किया; पर पैर न डगमगाया। इतने बड़े राष्ट्र का बोझ उठाये घूमते हैं, पर क्या मजाल कि कमर ज़रा भी लचक जाय। इतने सीधे सरल वेज़बान इंसान हैं कि कितने ही अमरीकी और अंग्रेज़ी हुक्मों के पुलिन्दों को अपनी पीठ पर लादे जाने पर भी, प्रेमपूर्वक पूँछ तो हिलाई, पर कान कभी न हिलाया।

कम्युनिज़्म से आपको इसी प्रकार घृणा है, जिस प्रकार पंजाबी छोकरियों को देशी कपड़ों से। कम्युनिज़्म सरासर एक बला है। धर्म ख़तरे में, राष्ट्र ख़तरे में, सबसे भयंकर और दिल हिला देनेवाली बात—च्यांग काई शेक की सामन्तशाही ख़तरे में। इस मामले में जनरल च्यांग काई शेक सच्चे रजपूत हैं। 'प्राण जायँ, पर वचन न जाई।' ठाकुर के मुँह से जो निकल गया, सो निकल गया। मजाल है कि क़दम पीछे हट जाय। समझौता भी हो, तो कम्युनिस्टों से! ईसा! ईसा!!

कम्युनिस्टों से समझौता करने के मामले में आप उस मानिनी फूहड़ औरत के समान हैं, जो खीर खसम को नहीं देती, चाहे उसे कुत्ता चाट जाय। चीन का चाहे कचूमर निकल जाय; लेकिन कम्युनिस्टों से समझौता न किया जाय। साम्यवादी नेता जनरल चौ एन लाई ने बड़ी बड़ी कोशिशें कीं, मगर बेकार।

च्यांग काई हठ के खूँटे से खुलकर समझदारी के खेत में न आये, जहाँ जापानी वाराह उनकी ईख खाये जा रहे हैं। कहते हैं—शिव-संकल्प ! लच्छन तो खा कमाने के हैं, आगे राम जाने।

जनरल च्यांग काई शेक सैनिक आदमी हैं। जापानी सीनों में संगीन घुसेड़ने के लिए इनकी भुजाएँ फड़कती रहती हैं। बढ़कर हमला करने के लिए टाँगें कुलबुलाती रहती हैं; पर 'होमफ्रण्ट' पर आपकी संगीन ज़ंग खा जाती है। वीर भुजाएँ सैल्यूट करने को तैयार हो जाती हैं।—टाँगें लड़खड़ा जाती हैं। पैटीकोट सरकार का सामना करने में हिम्मत हेकड़ी भूल जाती है। मैडम के सामने सिर झुकाने – बिना शर्त हथियार डालने के लिए दिल सदा बेताब रहता है। और ठीक भी है—एक आदमी दो दो मोर्चों पर कैसे लड़े। अगर घर में ही ठन जाये, तो दुश्मन की बन आये। इसलिए 'होमफ्रण्ट' पर संधि नीति का अपनाना ही राजनीतिक समझदारी है। सुलह में होमडिफेंस बना रहता है; वरना घर का भेदी लंका ढावे।

कहते हैं, मैडम की मर्दानगी की छापकें पत्निभक्त हृदय पर बड़ी छाप है और इसीलिए कम्युनिस्टों को भी यह मुँह नहीं लगाते। मैडम यह कैसे चाह सकती हैं कि दोनों को मुँह लगाया जाय।

पत्नीभक्ति में आप राजा दशरथ से भी दस हाथ आगे हैं। समय समय पर आप इसकी सफ़ाई भी देते रहते हैं। न जाने क्या मौक़ा है। मैडम आख़िर औरत ही तो हैं, अगर शक पड़ गया तो जनरल च्यांग की प्रेम की दुनिया ही उजड़ जायगी। और पत्नी में भक्ति करना तो ईसाइयों का धार्मिक अधिकार है। इसी का लाभ आप उठाते हैं। एक

यार कुछ यार लोगों ने जनरल के बारे में कुछ बेपर की उड़ा दी थी। आपने चुंकिंग की एक चायपार्टी में इसकी सफ़ाई दी – मैं एक सच्चा ईसाई हूँ। मैं सच्चा पत्नीभक्त हूँ। मुझमें और मेरी पत्नी में अगाध प्रेम है।— बिल्कुल ठीक!

जनरल च्यांग काई शेक सच्चे ईसाई हैं, सच्चे पत्निभक्त हैं और एक सिपाही हैं। सिपाहियों को प्रेम के जंजाल में सिर फँसाते कम देखा गया है। पर यह सब कुछ होते हुए भी जनरल के सीने के नीचे एक फुदकता हुआ दिल है। उस दिल में मीठा-मीठा दर्द भी कभी कभी हुआ करता है और उस दर्द की दवा कर लेना ईसाइयत के ख़िलाफ़ तो तनिक भी नहीं।

इसी दर्दभरे दिल को धीरज देने के लिये किसी सुन्दरी की आवश्यकता आ पड़ी। और अगर आवश्यकता भी न सही, तब भी ज़ायक़ा बदलने के लिए कभी कभी सावन में पी लेना गुनाह नहीं है।

सो जनरल च्यांग कभी दिल की दुनिया के खेल भी खेल लिया करते हैं। कुमारी चेन चीनजू के साथ जनरल की कुछ प्रेम भरी कहानियाँ जुड़ी हैं। सोलह वर्ष की कुमारी, गदरा यौवन, उभरती जवानी और फिर जनरल के साथ कितने ही दिनों तक यात्रा! दिल अगर क़ाबू में न रहे तो ईसाई धर्म बेचारा क्या करे। इसके सिवा रात-दिन लोहे से खेलते खेलते उकताई हुई ज़िन्दगी को रस देने के लिए कोई फूल तो चाहिए। और सच्चा मनुष्य तो वही है, जो एक कान से गोलों की धड़ाम-धड़ाम सुनता है और दूसरे कान से किसी मधुबाला की नूपुर-ध्वनि। जनरल च्यांग में प्रेमी और योद्धा का शानदार सम्मेलन है।

अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में जनरल च्यांग का वही शानदार स्थान है, जो किसी फ़िल्म की अभिनेत्रियों में एक्सट्रा एक्ट्रेस का होता है। एक्सट्रा रोल अदा करनेवाली एक्ट्रेस बड़ी शान से अपने को एक्ट्रेस कहकर रौब डालती फिरती है; लेकिन फ़िल्म में जनाब की पूछ नहीं होती। एक्सट्रा एक्ट्रेस, फ़िल्म की वह सार्वजनिक सम्पत्ति है, जिसे डाइरेक्टर से लेकर कम्पनी के मालिक के साले के दोस्त तक इस्तेमाल करने का हक़ रखते हैं; लेकिन काम पड़ने पर सभी दाँत दिखा देते हैं। ठीक यही ऊँची पोज़ीशन जनाब च्यांग काई शेक को नसीब है।

सैनिक दृष्टि से आपका उतना ही महत्व है, जितना लावारिस मंदिर के खण्डहर का। वक़् बे वक़् महल्ले के सभी आदमी उसमें टट्टी-पेशाब कर आते हैं, लेकिन उसकी मरम्मत कराने को कोई भी तैयार नहीं होता। 'चढ़ जा बेटा, सूली पर, भली करेंगे राम!' जैसे उत्साहजनक शब्द कहकर गोरे राजनीतिज्ञ आपको दुश्मन के सामने अड़ा देंगे; लेकिन मदद के नाम पर दूर से ही लाल झण्डी दिखाते रहेंगे। फिर भी आप एक सच्चे दोस्त हैं।

कुल मिलाकर आप बहुत कुछ हैं। फिर भी ज़्यादा नहीं तो इतना अवश्य कहा जा सकता है—

च्यांग चीन के चालाक चाचा और चर्चिल के चाकर हैं। जापान के जानी दुश्मन और जवाहरलाल के जिगरी दोस्त हैं। हिन्दुस्तान की हिमायत करते हैं और ग्रेट-बर्तानिया की यारी का दम भरते हैं, अमरीका से आशनाई निभाते हैं और रूस से, दिल में तो रूठे रहते हैं, पर ऊपर से प्यार दिखाते हैं।

जनरल च्यांग काई शेक अपनी मैडम के इशारे पर टेढ़ा-तिरछा नाच दिखानेवाले सर्वप्रथम पति हैं। ईसाई धर्मानुसार आप मैडम के पति हैं—पर दिली दुनिया के क़ायदे के अनुसार आप मैडम की पतिव्रता पत्नी हैं। घोड़े की सवारी का ख़ास शौक़ है, लेकिन मैडम की आज्ञा-पालन के शौक़ से ज़्यादा यह बढ़ नहीं पाता।

विश्व की राजनीति में जनरल च्यांग एक अनिच्छित दयनीय दुर्घटना हैं। दिल के कोने-कोने से गोरों के ग़ुलाम हैं। फ़ौजों को भड़काते हैं, चीन में रौब दिखाते हैं और गोरों के सामने गिड़गिड़ाते हैं।

एक सच्ची देवदासी की तरह आप पूरी आस्था से गौरांग महाप्रभु के मंदिर के द्वार पर पुतलियों में श्रद्धा के आँसू भरे गाते रहते हैं—

करुणा हस्त बढ़ाओ द्वार पड़ा तेरे। प्रभु...

आपकी भक्तिभावना मीरा को भी मात करती है। आपने यह साबित कर दिखाया है—

द्वार धनी के परि रहो, धका धनी का खाय।
कबहूँ धनी निवाजिहैं, जो दर छाँड़ि न जाय।

धक्के खाकर द्वार पर पड़े रहो, कभी तो धनी दया करेगा ही। आप एक गले पड़ी पत्नी और पिछलग्गू प्रेमिका हैं। आख़िर आपके प्रेम ने असर तो दिखाया और अमरीका और इँगलैण्ड की मदद से चीन कम से कम जापानी पंजे से तो छूटा—भले ही इस छुटकारे में नया जेलजीवन शुरू हो।

: : झक्खी दार्शनिक : :

आयरिश जीवन के तीखेपन के प्रतीक, आयरिश होने का अभिमान लिये जार्ज बर्नार्ड शा ने क़लम का हल चलाना शुरू किया। इस हल ने कितने ही कठोर दिलों की जमीन को निर्दयता से जोत डाला। शा महोदय बाँयें हाथ से १६वीं सदी का बुढ़ापा और दाँयें से २०वीं सदी की जवानी सँभाले हुए हैं। इस समय आप ८० वर्ष की सीमा की दीवार लाँघ चुके हैं। शरीर बूढ़ा हो चुका है, पर क़लम में अब भी वही जवानी बोल रही है।

आप इस युग के उन महान् झक्खियों में हैं, जो अपनी महानता की याद सदा दिलाते रहते हैं। मौक़े-बेमौक़े अपने ऋषिपन का ज़िक्र कर देना आप कभी नहीं भूलते। आपकी नज़र में सब दुनिया बेवक़ूफ़ों का बाज़ार है। सब व्यवस्थाएँ धोखेबाज़ों का रोज़गार हैं। विवाह एक बेबुनियाद बुद्धिहीनता है। गिरजा (धर्म) मनुष्य की गिरावट का नतीजा है। शासन शैतानों का जमघट है। समाज नैतिकता का मर्घट है।

सब कुछ बेतुका, सब कुछ सच्चाई का शत्रु, सब कुछ सोलहो आने लचर, सब कुछ ढाँचा, सब कुछ जर्जर, मौत का मेहमान—इन्हीं सनकी

विचारों ने आपको चर्चा का विषय बना दिया है। सबकी खिल्ली उड़ाना, सबकी दिल्लगी करना, सबका मज़ाक़ बनाना और सबकी ओर धूल उड़ाना—आपकी ख़ास सनक है। सब कुछ ऊटपटाँग चल रहा है, इसमें आग लगा दो—यह आपका नवाबी हुक्म है। पर नया घर बनाना है तो कैसा, इस पर आप बग़लें झाँकने लगते हैं।

बर्नार्ड शा वर्तमान व्यवस्था से असन्तुष्ट हैं और इसीलिए शासन प्रणाली को जली कटी सुनाते रहते हैं। एक बार चर्चिल की सरकार के बारे में आपने कहा था—चर्चिल एक सिरफिरा प्रधान मंत्री है। उसके साथी बुद्धिहीन हैं और उसकी सरकार की कार्य-प्रणाली पागलों का खेल है। उसको फ़ौरन् पार्लियामेण्ट से बाहर हो जाना चाहिए। लेकिन चर्चिल ऐसा अजीब आदमी है कि उसने शा महाराज की एक भी न मानी और पागलपन के काम किये गया। मानता भी कैसे! अगर इनकी बात मानकर इस्तीफ़ा दे देता, तो सिरफिरा ही क्यों होता।

बर्नार्ड शा पूरे सनकी हैं। सनक में आते हैं तो किसी की नहीं सुनते सन् १९३५ में इँगलैण्ड के बादशाह जार्ज पंचम की हीरक जयन्ती मनाई जा रही थी। आपको उस समय अमरीका जाने की सूझी। किसी पत्रकार ने पूछा—इस समय आप अमरीका चले हैं, जब हमारे बादशाह की जयन्ती मनाई जानेवाली है। आपने तड़ाक से जवाब दिया—इस जयन्ती की फ़िक्र बादशाह जार्ज अपने आप करेगा। मुझे क्या पड़ी! वह अपने प्रोग्राम की फ़िक्र करे, मैं अपने की करता हूँ। बेचारा पत्रकार मुँह ताकता रह गया।

शा ने शादी नहीं की है। ऐसे आदमी से शादी करना तो इँग-

लैण्ड की दिलफेंक छोकरियों के लिए एक शानदार फ़ैशन की बात है। एक दिन एक फ़िल्म-एक्ट्रैस आई और उछलते हुए दिल से कहा—आप इँगलैण्ड के सबसे बड़े विचारक हैं। मैं इँगलैण्ड की सबसे अधिक सुन्दरी हूँ। क्यों न दोनों विवाह कर लें और ऐसी सन्तान पैदा हो जिसमें आपका मस्तिष्क और मेरी सुन्दरता हो! सन्तान में माता-पिता का ही असर आयगा। शा ने सिर खुजलाते हुए कहा 'लेकिन एक डर है।' युवती ने आतुरता से पूछा—'क्या?'

शा मुस्कराते हुए बोले—अगर उसमें मेरी ख़ूबसूरती और तुम्हारी अक़्ल आ गई तो? क्या पसंद करोगी मेरी जैसी भद्दी और तुम्हारी जैसी बेअक़्ल संतान?

बर्नार्ड शा नो अपने को अक़्ल का ठेकेदार समझते ही हैं, कभी-कभी इनको इनसे भी ज़्यादा झक्खी और सनकी मिल जाते हैं। एक आदमी ने आपसे कई बार अपने हस्ताक्षर देने की प्रार्थना की; पर आ गये सनक में। "नहीं दूँगा, नहीं दूँगा, नहीं दूँगा—समझे। नहीं दूँगा।" आपने उसको साफ़ इनकार कर दिया।

वह भी अजीब धातु का बना था। उसने कुछ दिन बाद आपको पत्र लिखा—मैं आपके उस ड्रामे का अनुवाद करना चाहता हूँ। या तो आप आज्ञा दे दें वरना मैं बिना आज्ञा दिये ही उसका अनुवाद करके छपा लूँगा। पत्र पढ़ते ही शा महोदय ग़ुस्से में भर गये। इतनी मजाल कि मेरी बिना आज्ञा अनुवाद करके छापे! फ़ौरन् पत्र लिखा—ऐसा किया तो दावा कर दूँगा। तुम्हें कोई हक़ नहीं अनुवाद करने का। और पत्र के नीचे अपने हस्ताक्षर भी कर दिये—बर्नार्ड शा!

उसने हस्ताक्षर काटकर धन्यवाद देते हुए पत्र लौटा दिया। तब शा की अक्ल में आया। यह धूर्तता! अपनी समझदारी पर इतना पछतावा हुआ कि कई दिन तक मिलनेवालों से झूठ मारना भी छोड़ दिया।

शा महोदय बिल्कुल नये विचारों के आदमी हैं। और सोशलिज़्म (साम्यवाद) इस युग की नई विचारधारा है। आप सोशलिस्ट हैं, ऐसा आपके धर्म कर्म से धोखा होता है। एक बार एक साम्यवादी सभा में आपको बुलाया गया। खूब गरमा गरम लेक्चर दिये गये। जवानों ने आग बरसानी शुरू की। आपने भी जवानी की गर्मी का सबूत दिया और कहा—आजकल की आर्थिक व्यवस्था समाज के लिए अभिशाप है, मैं जब धनियों को मोटरों में चलते और ग़रीबों को पैदल घिसटते देखता हूँ, तो जी जल जाता है। जी में आता है, मोटरों में आग लगा दूँ।

आग भरे लेक्चरों के साथ सभा समाप्त हुई। लोग जोश भरे विचार लेकर वहाँ से निकले। सामने ही एक बढ़िया मोटर खड़ी पाई। चारों तरफ़ शोर मच गया—मोटर में आग़ लगा दो। मोटरवालों और पैदलों का फ़र्क़ मिटा दो। मोटर जला देंगे...चलो इसमें आग लगा दो। कह कर भीड़ मोटर की ओर दौड़ी। शोर सुनकर, शा साहब भी उधर भागे और चिल्लाए—अरे क्या कर रहे हो? ठहरो! उधर से आवाज़ आई—मोटर में आग लगा देंगे।

शा उधर भागे। अरे क्या करते हो? ठहरो तो। लोग कुछ देर ठहरे। शा भी उनके पास पहुँचे। पूछा—क्या करते हो? जवाब मिला—इस मोटर में आग लगा देंगे। "अरे यह तो मेरी मोटर है—इसमें आग!" शा चिल्लाये। भीड़ बड़ी लज्जित हुई। शा साहब मोटर लेकर घर आ गये। दिल में बड़े

बिगड़े—कितने बेवकूफ़ हैं । एक साम्यवाद की मोटर ही जलाए डालते थे । क्या ख़ाक साम्यवाद का प्रचार होगा !

शा इस युग में बहुत प्रसिद्धिप्राप्त साहित्यिक हैं। अपने जीवन में इतनी चर्चा शायद किसी अन्य की हुई हो, जितनी आपकी हो रही है। लेकिन शुरू शुरू में आपके जीवन में भी आपकी उपेक्षा की गई थी। इस उपेक्षा को देखकर आप कहा करते थे कि दुनिया मूर्ख है, मुझे क्या समझेगी !

आपके एक ड्रामे पर किसी ने आलोचना लिखते हुए कहा था—यह बूढ़ा बन्दर जनता पर नारियल फेंकता रहता है । सचमुच, बूढ़ा बन्दर नारियल फेंकता है, पर जनता को चाहिए कि उनको फोड़कर उनका रस पीए । पर आज जनता इस बूढ़े बन्दर का महत्व समझ गई है ।

शा में एक अहम् है, जो उनके लिए तो भले ही शानदार हो; पर कुछ नये बुद्धुओं को गुमराह करनेवाला है। आप अपने को महात्मा, संत, ऋषि सब कुछ मानने में कोई परहेज़ नहीं करते । उल्टी गंगा बहाने का आपको निराला ख़ब्त है। सबकी खिल्ली उड़ाना आपका ख़ास शौक़ है। अंग्रेज़ों से आपको विशेष नफ़रत है, यह रोग यहाँ तक बढ़ा कि आपने अपने नाम के पहले का 'जार्ज' इसलिये उड़ा दिया कि यह एक अंग्रेज़ी नाम था ।

संसार के आप महान् विचारक और नाटककार हैं । मौत को आप एक आदत समझते हैं, जो छोड़ी भी जा सकती है। पता नहीं, आप यह आदत छोड़ेंगे या नहीं । साहित्य से आपने करोड़ों रुपया कमाया है । वह आप साम्यवाद के प्रचार में दे जायँगे, या आयरलैण्ड के उद्धार के लिए—यह अभी तय नहीं किया ।

: : पाकिस्तानी बादशाह : :

जी हाँ, आप ही हैं मि० जिन्ना—मुसलमान नवाबों और जी-हुज़ूरों के परम प्यारे और भारत के भाग्य के आसमान में टिमटिमाते हुए दुमदार सितारे। पहचानने में भूल न कीजिए। उन दिनों की तस्वीर से आपकी सूरत का मिलान न करें, जिन दिनों सीने में रोमांस समेटे, बैरिस्टरी के रोब का शानदार चोगा लपेटे, जीवन की सड़क पर आप दुलकी चाल दिखा रहे थे। आज तो दिल की उमंगें राख हो चुकी हैं, जवानी को कुरा लगा गया है।

उन दिनों की फ़ोटो से भी आपकी वर्तमान मूरत का मिलान न कीजिए, जिन दिनों कांग्रेस का नशा सवार था—सूट-बूट टाई-टूई के भीतर एक राष्ट्रीय आत्मा चूँ चूँ कर रही थी। आज दिन बदल चुके हैं। राष्ट्रीयता की छछूँदर की बोलती बंद हो चुकी है। अब तो मुँह में साम्प्रदायिकता का कौआ काँय-काँय करता रहता है। आज तो चेष्टा में चिड़चिड़ापन, ओठों पर गालियाँ, हरकतों में प्रतिक्रिया और कर्म में दुराशा खेलते रहते हैं। वक़्त बदल चुका। जवानी ढल चुकी। बुढ़ापे में तो आशावत बना लें। खुदा को भी कुछ जवाब देना है।

इसीलिए मि० जिन्ना ने अपना सारा बुढ़ापा इस्लाम के उद्धार के

लिए दे डाला। आजकल आप मलाबार हिल पर, अपने बँगले के ड्राइंग-रूम में, बिजली के पंखे के नीचे, स्प्रिंगदार सुकुमार सोफ़े पर पड़े इस्लाम के हित के लिए सिगार के कश लेते रहते हैं। और पाकिस्तान की बादशाहत के मीठे सपने देखते हुए, दिल में नवाब वाजिदअली को ललकारते रहते हैं—ज़रा पाकिस्तान बन तो जाय, फिर देखना, शहंशाह जिन्नाशाह की शान!

इन दिनों इस्लाम के उद्धार का भूत आपके सिर पर बनावटी नहीं, सचमुच बुरी तरह सवार है। इसी ग़म में घुल-घुलकर छेपट हुए जाते हैं। देखते नहीं, क्या से क्या हो गये! मुँह चुभी चिलम जैसा लगता है। गाल सूखकर छुहारा हो गये। सिर के बाल जैसे झुलसी हुई अधपकी खेती। हँसते हैं तो दाँत दिखाते हैं, जोश में आते हैं तो बाँस की तरह काँप जाते हैं। या ख़ुदा, अपने इस नाज़ुक बन्दे पर मेहर का साया रखियो! अगर बुढ़ापे में कुछ हो गया तो पाकिस्तान की बादशाहत कौन करेगा!

मि० जिन्ना के कारनामों से अनजान, दीन के दुश्मन कह दिया करते हैं—मि० जिन्ना ने इस्लाम के लिए क्या किया? इनके सवाल पर मि० जिन्ना को इतना ग़ुस्सा आता है कि अमचूर जैसे गालों की झुर्रियाँ फड़कने लगती हैं। साथ ही इस सवाल पर इतनी नफ़रत भी होती है कि मि० जिन्ना जवाब देना भी पसंद नहीं करते। और अपने त्याग का स्वयं बखान करना क्या भला लगता है? मि० जिन्ना चाहे न बोलें, मुँह न खोलें, पर—"जो चुप रहेगी ज़बाने खंजर,
लहू पुकारेगा आस्तीं का।"

त्याग कहीं छिपता है।

ऐसे लोगों की आँखें खोलने के लिए हम कहते हैं। इस्लाम की भलाई के लिए मि० जिन्ना इंगलैण्ड-जैसा मुल्क छोड़कर भारत-जैसे उजड्ड देश में आकर बसे। इस्लाम के हित के लिए हैट त्यागकर वालों-वाली टोपी सिर पर रखी [सिर भन्ना गया होगा, जिस वक्त यह त्याग किया होगा] शानदार डबल ब्रेस्ट कोट त्यागकर अचकन लटकाई। और तो और, पतलून त्यागकर चूड़ियोंदार तंग पैजामा तक पहनने लगे। मालूम है, कितनी तकलीफ़ होती है, तंग पैजामा पहनते हुए। एड़ी के ऊपर चढ़ाते हुए 'आह' निकल जाती है! चूड़ियाँ डालने में मि० जिन्ना का सुनहरा वक़्त लगता है। इतना तो त्याग किया, फिर भी सवाल! और क्या मि० जिन्ना की जान लोगे?

कितने ही लोग कह दिया करते हैं, मि० जिन्ना मुसलमान नहीं। वे ऐसी वैसी मिसाल भी दे दिया करते हैं। एक बार की घटना है। बहुत बार समझाने-बुझाने और मजबूर करने पर मि० जिन्ना नमाज़ पढ़ने पर राज़ी हुए। आपके सामने जो आदमी नमाज़ पढ़ रहा था, उसी को देख-देख कर आपने भी 'ड्रिल' करनी शुरू की। [याद रखने लायक़ बात यह है कि मि० जिन्ना ने नमाज़ के वक़्त बिलकुल भी सिगरेट नहीं पी।] थोड़ी देर बाद आप भूल गये। तुरन्त अगले आदमी से पूछा—yes, what next? हाँ, आगे क्या करूँ? वह भौंचक्का-सा रह गया!—मस्जिद में भी अंग्रेज़ी!

मि० जिन्ना के विरोधी इसी घटना को अक्सर उनके विरुद्ध काम में लाया करते हैं। उनका कहना है कि जिन्ना साहब न कभी नमाज़

पढ़ते हैं, न क़ुरान शरीफ़ बाँचते हैं। न कभी रोज़ा रखते हैं, न मौलूद मजीद सुनते हैं। एक बार नमाज़ पढ़ी, वह भी भूल गये! छी. छी! उनको उर्दू तक भी नहीं आती। मस्जिद में अंग्रेज़ी! यह कुफ्र! तब मि० जिन्ना मुसलमान कैसे? पता नहीं, मि० जिन्ना ने कौन उनकी ज्वार चुरा ली है कि हाथ धोकर उनके पीछे पड़ गये हैं।

रही क़ुरान और नमाज़ न पढ़ने की बात। कहनेवाले अपने दिल पर हाथ रखकर सोचें। जिसका दिल दीन-इस्लाम के ग़म में डूबा हो, इस्लाम के उद्धार की चिन्ता में जो न दिन को चैन पाता हो, न रात को आराम, जो मुसलमानों के हित में बावला बना हुआ हो, उसे भला क़ुरान या नमाज़ पढ़ने की सूझती है। जिसके दिल को लगती है, वही जानता है। लोग तो बिना सोचे समझे मुँह फाड़ देते हैं।

नमाज़ पढ़ते-पढ़ते भूल गये, यह भी दोष लगाया जाता है। जिन्ना साहब हैं तो आदमी ही। ग़लती हो जाना आदमी की पहचान है। और जिसने कभी नक़ल की ही न हो, जो सिर से पैर तक मौलिक हैं, वह भला देखा देखी काम कैसे कर सकता है। रही रोज़ा रखने की बात। जो आदमी मुसलमानों के फ़िक्र में ही सूख सूख कर ढाँचा रह गया, रोज़ा रखाकर क्या उसे मारना चाहते हो? रोज़ा रखकर अगर मि० जिन्ना जान दे बैठें, तो मुसलमानों की नैया का खिवैया कौन होगा? तब रोयेंगे सिर पीटकर।

इसके सिवा जिन्ना साहब कई बार कह चुके हैं—क़ुरान पुरानी, समय-विरुद्ध और व्यर्थ की पोथी है। ऐसी पोथी वह क्यों पढ़ें? बुढ़ापे के कारण उनका शरीर भी तो जवाब दे रहा है। इस उम्र में उठ-बैठ

करना उनके वश का काम नहीं। जब वह चुरट के लहराते हुए धुएँ में ही ख़ुदा का जलवा देख लेते हैं तो नमाज़ पढ़कर काया-कष्ट कौन करे। ख़ुदा हर जगह मौजूद है। जिन्ना साहब के बँगले में तो विशेष रूप से आकर हाज़िरी दिया करता है। मुसलमानों की भलाई के लिए तरकीबें बताने आया करता होगा।

और ख़ुदा तो अहमाल देखता है। जिन्ना साहब के जैसे अहमाल हैं, उन्हें दुनिया जानती है। ख़ुदा के भेजे हुए फ़रिश्ते मि० जिन्ना की हरएक हरक़त को लिखते रहते हैं और ऐसे भले काम करने के लिए उनको अधिक से अधिक उकसाते रहते हैं। मि० जिन्ना रात दिन कांग्रेस को कोसते हैं। पाकिस्तान की फुलझड़ी छोड़ते हैं। महात्मा गांधी और आज़ाद को अकड़ दिखाते हैं, सरकार के सामने गिड़गिड़ाते हैं। दो-दो राष्ट्र की चीख़-पुकार करते हैं, गोरों के क़दमों पर सिर धरते हैं—यह सब किसलिए? मुसलमानों की भलाई के लिए।

इतना सब होते हुए भी, उनको मुसलमानियत से ख़ारिज किया जा रहा है। यह तो सरासर अंधेर है। मि० जिन्ना एक पक्के, सच्चे और ठोस मुसलमान हैं—भले ही वह रमज़ान के दिनों में गांधीजी से भेंट करते हुए चुरट पीते रहे हों। भले ही मौलाना मदनी, बुख़ारी, अज़हर साहब इसे कुफ़्र समझें। चुरट से दिमाग़ की नसें ठीक काम करती हैं। और जहाँ आठ करोड़ मुसलमानों का सवाल हो, वहाँ तो दिमाग़ ठीक ही रहना चाहिए। मुँह से चुरट लगी रहने में जो शान है, इसे या तो चर्चिल समझते हैं या मि० जिन्ना ही—पाकिस्तानी साम्राज्य के चर्चिल!

बहुत-से लोगों का बेबुनियाद मत है कि मि० जिन्ना के पाकिस्तान का

सपना कभी पूरा नहीं होगा। बहुत-से वाचाल तो यहाँ तक बक झक दिया करते हैं कि मि० जिन्ना पाकिस्तान के नहीं क़ब्रिस्तान के बादशाह बनेंगे। ऐसे लोगों को समझ लेना चाहिए कि मि० जिन्ना भी वह जिन्न हैं, जो पाकिस्तान लिये बिना हिन्दुस्तान के सिर से टलनेवाले नहीं। पाकिस्तान का मज़ाक़ बनानेवाले एक दिन देखेंगे कि पाकिस्तान मिल चुका है और जिन्ना साहब पाकिस्तान के पहले बादशाह बनाये जा चुके हैं।

एक दिन मालूम होगा, जब पाकिस्तान के पहले बादशाह मि० जिन्ना का जलूस निकलेगा। अरबी इस्टाइल की ऊँटनी पर जिन्ना शाह सवार होंगे। सिर पर, ज़रा एक ओर को तिरछी सफ़ेद गोटा लगी हरी दुपल्ली टोपी, कमर में फ़ीरोज़ी रंग की अचकन, पैरों में जामनी रंग के कमरबंदवाला सफ़ेद पाजामा पहने मि० जिन्ना शोभायमान होंगे और गोद में मोटी दुमवाला एक दुम्मा मिमियाता होगा। दुम्मे की दुम को सहलाते मुसकराते मि० जिन्ना चारों तरफ़ नज़रें फेंकते होंगे।

दाएँ-बाएँ नवाब ममदोट और नवाबज़ादा लियाक़तअलीख़ाँ खजूर का चँवर डुलाते होंगे। फ्रन्टियर के औरंगज़ेब ख़ाँ ताड़ के पत्तों की छतरी लगाये होंगे और सर सिकन्दर के शहज़ादे सरदार शौक़त हयात ख़ाँ ऊँटनी का रस्सा पकड़े आगे-आगे चलते होंगे। ऊँटनी की पूँछ से ख़च्चर की लगाम बँधी होगी, और ख़च्चर पर सवार होगी—बी-मुस्लिम लीग। ख़च्चर की पूँछ से गधे का रस्सा बँधा होगा और गधे पर सवार होगा पाकिस्तानी कमाण्डर इनचीफ़ लीग का झण्डा लिए हुए। गधे की पूँछ से बँधी होगी दुम्मे की रस्सी, उसकी दुम में बँधी होगी एक छोटी-सी गाड़ी, जिसमें रखा होगा मि० जिन्ना का जीवनचरित।

'मि० जिन्ना ज़िन्दाबाद'—'मुस्लिम लीग की फ़तह' के नारों से आसमान गूँजता होगा। देखनेवालों की भीड़ लगी होगी। और उसी भीड़ में फ़ुटपाथ पर बकरी की रस्सी पकड़े खड़े देखते होंगे गांधीजी और बकरी कर रही होगी—में ऽ ऽ में ऽऽ...। मि० जिन्ना शान से गांधीजी की तरफ़ एक नफ़रत भरी नज़र फेंकेंगे और गांधीजी चश्मे से ऊपर पुतलियाँ करके जिन्नाजी की तरफ़ खिसियाने से देखते रह जायँगे। यह दिन आयगा, अवश्य आयगा—ऐसा जनूनी विश्वास जिन्ना साहब का है।

जो लोग मुसलमान होकर भी जिन्ना साहब पर यक़ीन नहीं लाते, उनकी लिस्ट जिन्ना साहब अल्ला मियाँ के पास भेज रहे हैं। चाहे ख़ुद ही जाना पड़े, लेकिन वह उन लोगों को सज़ा दिलाये बिना न मानेंगे। जो हिन्दू ईमान नहीं लाते, पाकिस्तान बन जाने पर उनकी अक़्ल ज़रूर दुरुस्त की जायगी; यह बात जिन्ना साहब ने अपनी डायरी में नोट कर ली है।

मि० जिन्ना आवाज़ में भले ही पिलपिले हों, इरादों में बड़े मज़बूत हैं। आपकी मज़बूती को देखकर ही किसी पंजाबी मुसलमान ने लायलपुर में आपको एक ज़ंग-लगी तलवार भेंट की। आपने पाकिस्तान की प्राप्ति के लिए तलवार का प्रयोग करने की धमकी भी दी। लेकिन शायद कमबख़्त लोहार ने अभी उसका ज़ंग साफ़ नहीं किया और ज़ंग-लगी से क्या फ़ायदा। लेकिन उस पंजाबी को पता नहीं; यहाँ तलवार उठाते ही जिन्ना साहब की पतली कमर टूट जाने का डर है।

ख़ैर, कुछ भी हो। इसमें ज़रा भी शक़ नहीं कि जिन्ना साहब ने मुसलमानों की भलाई करने का ठेका बहुत सस्ते में ही ले लिया है। न

कुछ देना पड़ा, न ख़र्च करना, फ़ायदे का काम है। सिर्फ़ गोरों के सामने सिर झुकाना पड़ता है, उसकी तो आदत है ही—

"सरकार के क़दमों की गर ख़ाक मयस्सर हो।"

तो हम तर जायँ। और क़िस्मत अच्छी है कि सरकार के क़दमों की ख़ाक उनको मयस्सर है!

: : हिसावी नेता : :

तेलगू प्रांत में नियोगी ब्राह्मण कलाबाज़ियों के लिए प्रसिद्ध हैं। वह ऐसा जाल फेंकता है, कि फँसनेवाला लाख हाथ-पैर मारे, पर निकलना असम्भव। उसके सामने बड़े-बड़े चौकन्ने चौकड़ी भूल जाते हैं। बड़े-बड़े चालाकों को वह चकमा दे सकता है। राजनीतिक चालें चलने में, विरोधी को मसलने में; दुश्मन को फँसाने में, अक़्ल की अनोखी कसरत दिखाने में नियोगी ब्राह्मण अपने समान आप ही हैं।

इन्हीं नियोगी ब्राह्मणों में डा० पट्टाभि सीतारमैया ने अवतार लिया। मुसलीपट्टम में आपकी जोत प्रकट हुई—उसी मुसलीपट्टम में, जिसे यूनानी लोगों ने मलमल का सबसे बड़ा उत्पादक नगर कहा है। तेलगू प्रांत में आप मूँछोंवाले नेता हैं और इस युग में जबकि हरएक नेता के मुँह से मूँछें ऐसी ग़ायब होती जा रही हैं, जैसे मि० जिन्ना के हृदय से समझौते का विचार, तब भी डा० पट्टाभि मूँछों को इतना प्यार करते हैं, जितना एक ग़रीब अपने राशन कार्ड को करता है। तेलगू प्रांत में आप इस तरह मशहूर हैं, जिस तरह किसी गाँव की झोपड़ियों में चामुण्डा का चबूतरा।

नई पतीली की तली जैसी चमचमाती खल्वाट खोपड़ी, खोपड़ी को

सामा म घुसता हुआ सपाट माथा, मुँह पर पत्थर-काल की तितर-बितर झाड़ीनुमा मूँछें और लम्बा क़द—शारीरिक रूप में यही आपकी परिभाषा है। शारीरिक रूप में ईश्वर ने जो भी बख़शीश आपको दी है, सब अभी ज्यों-की-त्यों सुरक्षित है।, डाक्टर साहब ने कुछ खोया नहीं।

डाक्टर पट्टाभि मैडीकल (दवाओं के) डाक्टर हैं। डाक्टर भी अपने-जैसे आप ही! आपके नुसख़े की सूरत देखते ही रोग दुम दबाकर भागता है, पर आपसे दवा लेने पर रोगी बिना रोक-टोक यमलोक सिधारता है। बहुत दूर-दूर से आकर लोग आपसे नुसख़ा लिखा ले जाते हैं; पर आपसे दवा लेने में बड़े बड़े भाग्यवान् भी घबराते हैं—नास्तिक भी भाग्यवादी बन जाते हैं।

आपके हाथ से दवा खाई कि न रोग रहा न रोगी। यह है आपके जादू भरे हाथों में करामात। गाँधीजी का क्या कम विश्वास है डाक्टर पट्टाभि पर—कांग्रेस का प्रधान तक बनाना चाहा; पर छींक या डकार आने पर डा० विधान या सुशीला की ही पुकार करते हैं। डा० पट्टाभि से इलाज कराने के मामले में गाँधीजी भी सत्य और अहिंसा के प्रयोग करते हुए ख़तरा खाते हैं।

डाक्टरजी की स्मरणशक्ति पर दाँत तले उँगली देनी पड़ती है। कहते हैं, भारत में स्मरणशक्ति के लिए अगर दो आदमी भी चुने जायँ, तो एक आप भी अवश्य होंगे। इस मामले में आप पूरे दानव हैं। अगर तीस वर्ष पहले भी काँग्रेस अधिवेशन के समय कोई घटना हो गई हो तो आप ज्यों-का-त्यों सारा हाल बता देंगे।

समझ लो, किसी मामले पर काँग्रेस के खुले अधिवेशन में वेंकटैया

और सुपारी घोप में हाथापाई हो गई। काँग्रेस वर्किंग कमेटी इस मामले का रिकार्ड रखना चाहेगी ही! यह तो राष्ट्रीय इतिहास की एक घटना है। तो डा० पट्टाभि से एक स्टेटमेण्ट ले लेना आवश्यक है। डाक्टर साहब अपना स्टेटमेण्ट देते हुए कहेंगे—उस समय डा० ऐनी बीसेण्ट काँग्रेस की सभापति थीं। काँग्रेस के खुले अधिवेशन में होमरूल-प्रस्ताव पर बहस हो रही थी। सुपारी घोप और वेंकटपैया में होमरूल के मामले पर झगड़ा हो गया। वेंकट कहता था—होमरूल में नारियल ज़्यादा फ़ायदेमंद है और सुपारी कहता था कि मछली चावल ही होमरूल होने पर लाभप्रद हो सकता है—आमार शोनार बाँगलार देश।

बहस बढ़ गई, दोनों झगड़ पड़े—अगर काँग्रेस वर्किंग कमेटी आवश्यक समझेगी तो दोनों का एकोएक जवाब-सवाल तक बता दूँगा—ख़ैर फिर भी इतना तो आवश्यक है ही। सुपारी के कुर्ते का ऊपर से तीसरा और नीचे से दूसरा बटन टूट गया। वेंकट की नाक के दाँई ओर कान से ४२ डिगरी पर तीन नाख़ून लगे। सुपारी का कुर्त्ता पिल्लई ने सिया था। कुर्ते की पूरी सिलाई साढ़े तीन आने दी गई थी। जिसमें सुपारी ने एक दुअन्नी खोटी मिढ़ा दी थी। [उस समय वह काँग्रेस-सदस्य नहीं था।] दोनों में जब झगड़ा हो रहा था तो गाँधीजी ने अहिंसा का उपदेश देते हुए कहा था—कर्मण्येवाधिकारस्ते, मा फलेषु कदाचन।

और यदि इस स्टेटमेण्ट पर वर्किंग कमेटी बहस भी करना चाहे तो गाँधीजी उसे इस वक्तव्य को अविकल रूप में स्वीकार करने पर विवश करेंगे। डाक्टर साहब का नाम काफ़ी है, इसकी सचाई के लिए! आपकी

स्मरणशक्ति पर गाँधीजी को भी इतना विश्वास है। डाक्टर साहब जो भी मुँह से उगलेंगे, वह ठीक ही होगा।

किफ़ायत और कंजूसी के आप आदर्श हैं। यहाँ तक कि अफ़ीम की पुड़िया का काग़ज़ भी आप ख़राब करना नहीं चाहते। उसको भी डायरी लिखने के काम में लाने के इरादे रखते हैं।

'सकल वस्तु संग्रह करे, आवे कोई दिन काम।'

वाली बात पर आप धार्मिक कट्टरता के साथ अमल करते हैं। काँग्रेस का इतिहास लिखने में आपने किफ़ायत का जो कमाल किया, वह अख़बारी चर्चा का विषय है। सिनेमा, थियेटर, सरकस, दवाइयों के इश्तिहारों और नोटिसों, ट्राम के टिकटों की कोरी पीठ पर आपने इतना बड़ा पोथा लिखकर तैयार कर दिया। राम जाने, कितने जन्मों से यह महाराज उनको समेट-समेटकर जमा करते जाते थे।

डाक्टर साहब के पास बेअंदाज़ बुद्धि है। आपके हर काम में दिमाग़ तो ढेर का ढेर मिल जायगा, पर दिल का कहीं खोज तलाश करने पर भी पता नहीं चलेगा। आपकी प्रतिभा से प्रसन्न होकर लोग आपको प्रतिष्ठा और सम्मान देते हैं; पर सीने में दिल न पाकर झुँझला उठते हैं। आपके ज्ञान के चक्कर में आकर लोग आपको नेता बनाते हैं—२-३ महीने में ही मालूम हो जाता है किस निकम्मे आदमी से पाला पड़ा। कार्यकारिणी की मीटिंग में आप इस बात की फ़िक्र नहीं करेंगे, कल कौन सा कार्यक्रम आरम्भ करना है या किस पालिसी को स्वीकार करना है; आप इस पर अधिक तन मन से ध्यान देंगे कि अमुक काम में ७ पैसे २ पाई अधिक क्यों खर्च किया गया? और जबकि ये डाक्टर साहब से सलाह लेकर

आसानी से बचाए जा सकते थे। भले ही उनको मदरास से बुलाना पड़ता; पर देश का धन तो बचता।

डाक्टर साहब के बारे में यह सबसे अधिक ख़ुशी की बात है कि आप आंध्र के एकमात्र ऐसे नेता हैं, जो ख़ूब कमाते हैं—भोजन के लिए किसी पर अहसान नहीं करते। आपने कई बैंकों और बीमा कम्पनियों की स्थापना की है। आप पक्के व्यापारी हैं। रद्दी से रद्दी चीज़ से भी पैसा बनाना जानते हैं।

उदाहरण के लिए—आप जेल में ए क्लास का लाभ उठा रहे हैं। आपको प्रतिदिन खाने के लिये एक टोकरी फल दिये जायँ। तो दूसरे दिन, केले के छिलके नाशपाती के बीज, नारियल के खोल, खजूरों की गुठलियाँ और टोकरी ठेकेदार को लौटाते हुए कहेंगे—अरे, भाई, कुछ सामान बच रहा है, इसके पैसे दे जाना। और नकद पैसे क्या—कुछ काग़ज़-पेंसिल, लिखने का सामान ला देना। तुम्हें भी कुछ बच रहेगा—तुम अपने ही आदमी हो। हम तुम्हें लाभ ही पहुँचाना चाहते हैं।

ठेकेदार भौचक्का-सा होकर कहेगा—नेताजी, ये तो छिलके हैं—इनके दाम! क्या ख़ूब!

डाक्टर साहब इस पर उसको समझाते हुए बोलेंगे—छिलके? और नाशपाती के बीज भी तो हैं। बीजों से ही बाग़ लगाये जाते हैं। ये कोई कम कीमती चीज़ तो नहीं। खजूर की गुठलियाँ—घिसकर आँखों में लगाओ, ठण्ढक पड़े। नारियल का खोल—पानी के लिए प्याला बना लो और जटाओं की रस्सियाँ बन सकती हैं। इतना सब दे रहा हूँ!

किसी चीज़ का फ़ायदा तो उठाना जानते ही नहीं, तभी तो व्यापार-धन्धे नष्ट होते चले जा रहे हैं ! राष्ट्र की इतनी बड़ी हानि !

वह बेचारा पागल सा बना डाक्टर साहब का मुँह ताकता रहेगा। डाक्टर साहब अपना लेक्चर जारी रखते हुए कहेंगे—और टोकरी भी तो है। अगर हम टोकरी फेंक दिया करें तो तुमको सप्ताह में ७ टोकरियाँ लानी पड़ेंगी और एक का दाम डेढ़ पैसे से कम न होगा। इसका मतलब है कि १० पैसे प्रति सप्ताह या १० आने प्रति महीने खर्च हुआ। हम यहाँ कम से कम साल भर से कम तो क्या रहेंगे। कुल ७ रुपये ८ आने खर्च हुए। अगर यह टोकरी तुमको लौटा दी जाती है तो ६ रुपये ८ आने हर साल बचत होती है। साथ ही नारियल के खोलों, खजूर की गुठलियों और नाशपाती के बीजों का भी मूल्य है। चलो १५) में फैसला रहा। अब तो इनकार न करने दूँगा।

डाक्टर साहब अक़्लमंद तार्किक लेक्चरार हैं ही, उसे विवश कर देंगे, विश्वास दिला देंगे और पैसे बना लेंगे।

हिसाब किताब के मामले में—फिगर एण्ड फेक्टस जमा करने में, आँकड़े एकत्र रखने में आप एक ही नम्बर हैं। अमरीका में एण्डीज़ पहाड़ पर चीड़ के कितने पेड़ हैं, एक पेड़ में कितने पत्ते हैं, और हर पत्ते में कितनी नसें हैं, यह आपकी उँगलियों के पोरवों पर रहता है। चौबीस घण्टे, आठ पहर, आपके मस्तिष्क की मशीन में जोड़-घटाना गुणा-भाग के पुरज़े चलते ही रहते हैं।

एक दिन कोई जैंटिलमैन आपके ही डिब्बे में सफ़र कर रहा था। उसको भूख लगी, तुरन्त खाना लाने के लिए बॉय को आर्डर दिया।

खाना आ गया, जिसका दाम था ३ रुपया। भारतीय राष्ट्र की फ़िज़ूल खर्ची भला डाक्टर साहब कैसे देख सकते थे, फ़ौरन् बोले—ओह! ३) का खाना एक वक्त में। आपको मालूम है एक भारतीय की औसत आमदनी क्या है?—केवल १ आना ४॥ पाई! आपको एक वक्त में ३) का भोजन करने का क्या हक़। सवा आठ पाई का भोजन एक वक्त में तुम कर सकते हो। ३) का भोजन!—इसका मतलब है, तुम साढ़े तिरसठ आदमियों का खाना खा गये। अगर इतने का भोजन खाते हो तो इतने देशभाइयों को भूखा मारते हो।

इसी प्रकार आपने एक घण्टे तक लेक्चर झाड़ा। अगले स्टेशन पर डाक्टरजी उतर गए। आपके लेक्चर का उस जैंटिलमैन पर इतना असर पड़ा कि वह आपके चले जाने पर बोला—कौन था यह झक्खी! सिरफिरा कहीं का, खाने का ज़ायक़ा भी बिगाड़ गया।

डाक्टर साहब के लेक्चर से हमने तो यही समझा है कि बंगाल में जो इतने आदमी भूखे मरे, वे इसी कारण कि बहुत से आदमियों ने ३-३ का भोजन अवश्य किया होगा। प्रति आदमी ने साढ़े तिरसट बंगालियों की रोटी हड़प कर ली। अन्न की कमी अपने आप पड़ती। बंगाल सरकार को दोष देना बेकार है। डाक्टर साहब को ऐसे आदमियों की जाँच करनी चाहिए और आँकड़े तैयार करके वर्किंग कमेटी में पेश करने चाहिए। राष्ट्रीय सरकार बन जाने पर उन लोगों को ४० दिन के उपवास का दण्ड दिया जाना चाहिए। फ़िलहाल एक उपसमिति बननी चाहिए, जो ट्रेन में, होटलों में खाना खानेवालों की जाँच करे—कोई औसत आमदनी से ज़्यादा तो खाना नहीं खा रहा है।

डाक्टर साहब अतिथि-सत्कार में पुराने भारत के आदर्श हैं। अतिथि की आवभगत करने में कुछ भी उठा नहीं रखते। लेकिन कोई भी आपका मेहमान बनकर आपके पट्टरस भोजन का स्वाद चखने का साहस नहीं करता। वह बेचारा डरता है कि डाक्टर साहब खिलाते समय कहीं हिसाब न रख रहे हों। वह कहीं गिनती न कर रहे हों—पौने चार पुलके, ढाई चमचे रायता, तो मुट्ठी चावल, एक कटोरी छाछ, सवा दो लाल मिर्ची, डेढ़ गिलास पानी—और आधा केले का पत्ता जिस पर भोजन किया। स्मरण-शक्ति ठहरी असाधारण—खिलाकर भूलने की कोशिश भी करें तो भी, भूल नहीं सकते।

टेलगू प्रांत को विश्वास है कि आप राजगोपालाचार्य को राजनीतिक चालबाज़ियों और चालाकियों में धोखा दे सकते हैं, पर ऐसा करके आपने कभी दिखाया नहीं। आगे क्या इरादा है, भगवान् ही जानें। आंध्र के आप भारी नेता हैं, पर जब आप नेतृत्व करते हुए पीछे मुड़कर देखते हैं तो मीलों तक कोई फौलोअर नज़र नहीं आता।

दिमाग़ से हिसाबी, हृदय से भावनाहीन, भावुकता में कंगाल और कर्मशीलता में रोमांटिक। स्वभाव के मज़ाक़िया और विचारों में छुटे हुए गुरू। नेता बनने की बुद्धि है, पर भाग्य सदा धोखा देता है। गाँधीजी ने सहारा देकर उचकाना चाहा, पर सुभाष ने हाथ मार दिया। खैर, यहाँ इन बातों का जीवन पर कोई असर नहीं, जेब पर असर न पड़ना चाहिए—यही कामना है, और कम्पनियाँ चलती रहें, यही अभिलाषा। अफ़ीम का शौक़ है और उसी की पीनक में राजनीति की नीरसता डुबाकर रोमांस का आनन्द ले लिया करते हैं।

: : वर्धाब्रांण्ड : :

सैलोलाइट के खिलौने, लोग जिनको अक्सर जापानी खिलौने कहा करते हैं, कितने खेल दिखाते हैं। चाबी भर दीजिए, आदमी की ज्यों-की-त्यों नक़ल करेंगे। कलाबाज़ी दिखाना, पैंतरे बदलना, बंदूक़ चलाना, नाचना, खेलना—सभी करके दिखा देंगे। फिर भी खिलौना आदमी की सही नक़ल नहीं कहा जा सकता। उसकी अपनी मौलिकता अवश्य है। चाबी ख़ाली हुई, खेल ख़तम, पैसा हज़म! चाबी नहीं रही, लुढ़क पड़े एक ओर को वह खिलौनेसिंह।

ये खिलौने विदेशों से आया करते हैं। इधर कांग्रेसी आन्दोलन से स्वदेशी की उन्नति और भारतीय ग्राम-उद्योग की ओर लोगों का ध्यान पागलों की तरह खिंचा। वर्धा में ग्राम-उद्योग (Cottage Industry) के लिए बहुत-से भारतीय दिमाग़ दण्ड पेल रहे हैं—यहाँ तक, पुरानी चीज़ों पर नया पालिश करके वर्धा का मार्का लगा दिया जा रहा है। स्वदेशी-आन्दोलन और ग्राम उद्योग की उन्नति होने से यहाँ भी खिलौने बनने लगे हैं।

छोटा सा साँवला बदन, घुटा हुआ सिर, आँखों पर काला चश्मा—इस खिलौने को जानते हैं? आप हैं श्री राजगोपालाचार्य—वर्धाब्रांण्ड,

मेड इन-मदरास, शुद्ध स्वदेशी, भारतीय काटेज इण्डस्ट्रीज़ का आदर्श नमूना—बहुत बढ़िया खिलौना ! देशभक्ति की चाबी जब कसकर भरी होती है, तो आप गाँधीजी की बहुत अच्छी नक़ल करके दिखाते हैं। झींकने-डकारने, खाँसने-खखारने, दाँत चमकाने और कान खुजलाने—सभी में कमाल का एक्टिंग करते हैं—कभी-कभी ओवर एक्टिंग भी हो जाता है, पर इनकी ईमानदारी पर शक नहीं किया जा सकता। घुटे सिर पर आप जब चादर का पल्ला ओढ़ते हैं, तो कम से कम फ़ोटो में अवश्य गाँधीजी का भ्रम हो ही जाता है। फिर भी यह हम क्यों कहें कि आप गाँधी महाराज की ग़लत नक़ल हैं।

आप सेलम में सफल वकील रहे। १९२१ के सत्याग्रह आन्दोलन में कूद पड़े और कई बार जेल की रोटियाँ भी चबाईं। आदमी अक़्ल का इस्तेमाल करनेवाले हैं—ऐसी छलाँग लगाई कि नेतापन की बहुत सी सीढ़ियाँ लाँघकर ऊपर आ बैठे। कितनी ही बार वेपेंदी के लोटे की तरह कांग्रेस के रसोईघर से लुढ़ककर बाहर आये। पर जब कांग्रेस राज मिलने की आशा दिखी तो कांग्रेस में आ घुसे और मदरास प्रांत के प्रधान मंत्री बन बैठे।

बहुत से पुराने घाघ मंत्री बनने के लिए बाँहें चढ़ाते ही रह गये, यहाँ आकर राज्य करना आरम्भ भी कर दिया। साथ ही लोगों ने ताज्जुब से आँखें फाड़-फाड़कर देखा—अरे ! सुबरायन और रामनाथन भी आपके दायें बायें शान से विराजमान हैं। ये कहाँ के कांग्रेसी आये ? कोई पूछनेवाला कौन ? राजा की मर्ज़ी, महामंत्री के मन की इच्छा, चाहे जिसे साथी चुने। और साहब, यह तो राजनीति है। इस बुड्ढे

शेर टी० प्रकाशम् को तो तभी सीमा में रखा जा सकता है, जब राजाजी के दो बॉडीगार्ड हों।

कुछ लोग कहते हैं—राजाजी राजनीति में बेपेंदी के लोटे हैं। इनकी नीति ख़ाक धूल कुछ भी समझ में नहीं आती। ऐसे लोगों से हमारी फटकार भरी प्रार्थना है कि बुद्धिहीन महानुभाव, वह नीति ही क्या जो समझ में आ जाय। और आप लोग उसे क्या समझेंगे, जब राजाजी स्वयं ही उसे नहीं समझ पाते। रही बेपेंदी के लोटे की बात—सो इसी में मज़ा है। जिधर मन चाहा लुढ़क पड़े। मनुष्य होकर भी मुर्दा सिद्धान्तों की सीमा में क़ैद रहें। जो आदमी अपने को इन उसूलों और सिद्धान्तों से आज़ाद नहीं कर सकता, वह अपने देश को क्या ख़ाक आज़ाद करेगा! अरे, नासमझ भारतवासियो, देश की आज़ादी से बदला होकर ही उन्होंने अपने प्यारे से प्यारे सिद्धान्त को धता बता दी। उफ़! देश के लिए इतनी आग! इसको उनके त्याग के रूप में देखो तो राजाजी का थोड़ा बहुत मूल्य आँक सकोगे।

कुछ ऐसे भी लकीर के फ़क़ीर हैं, जो लाख समझाने पर भी सिद्धान्त-सिद्धान्त की रट लगाया करते हैं। उनको राजाजी के वक्तव्य और व्याख्यान पढ़ने चाहिए। उनकी कौन-सी ऐसी बात है, कौन-सी ऐसी हरकत है, कौन सी ऐसी पैंतरेबाज़ी है, जिसका समर्थन वह गांधीजी के शब्दों से नहीं करते? अपनी हरएक समझदारी या मूर्खता, बौखलाहट या चिल्लाहट—सबका समर्थन वह गांधीजी के शब्दों का हवाला देकर कर देंगे। आप कह सकते हैं, बहुत-सी बातें गांधीजी ने कभी किसी वक्तव्य में नहीं कहीं, फिर भी अपनी बात के समर्थन के लिए वह गांधीजी का नाम ले

देते हैं। वक्तव्य में न कही, तो राजाजी के कान में ज़रूर कही होंगी। कान में भी नहीं कही सही, तो उनके हृदय में अवश्य होंगी और अपने रिश्तेदार के हृदय की बात तो राजाजी ही जान सकते हैं। आप क्या समझें!

राजाजी एक सच्चे कबूतर कांग्रेसी हैं। गांधीजी की डमी कॉपी ही समझिए। इसलिए सत्याग्रही के नाते आप जेल नियमों को मानने में सदा मुस्तैद रहते हैं। नियम-पालन की आप इतनी फ़िक्र करते हैं, जितनी अंग्रेज़ हिन्दुस्तान को सभ्य बनाने की भी नहीं करते।

एक बार नेल्लोर जेल में एक चाय-पार्टी दी गई। राजाजी भला निमंत्रित कैसे न किये जाते। आपने पेड़ा, जलेबियाँ, गुलाब जामुन, खूब छककर खाईं। चटकारा लेते हुए आपने प्रशंसा की—क्या खूब! जेल में भी इतना बढ़िया प्रबंध! संयोजकों को बधाई! कौन कह सकता है, हम स्वराज्य के योग्य नहीं, प्रबंध नहीं कर सकते। जो बंधनों में भी इतना अच्छा प्रबंध कर सकते हैं, स्वतंत्र होने पर क्या न कर दें; थोड़ा है। अब अवश्य मुल्क आज़ाद होकर रहेगा।

थोड़ी देर बाद लोगों ने सिगरेट आदि भेंट की। सिगरेट की सूरत देखते ही आप बिगड़कर बोले—जेल में सिगरेट! यह जेल नियमों के सरासर विरुद्ध है। एक सच्चे सत्याग्रही का यह काम! गांधीजी ने सुन लिया तो २१ दिन का उपवास रखने पर तुल जायँगे। यह अनर्थ!

"जलेबी उड़ाना और रसगुल्ले खाना तो बिल्कुल भी जेल-नियमों के विरुद्ध नहीं!" एक आदमी बोल उठा।

"कोई सीमा भी तो है साहब! नियम भी तोड़े जायँ तो क्या

वर्धात्राएड

तम्बाकू से मुँह जलाने के लिए। कहाँ जलेबी कहाँ सिगरेट।" दूसरा मुँहफट व्यक्ति बोल उठा।

राजाजी भला जेल-नियम तोड़ना कैसे सहन कर सकते थे। सच्चे सत्याग्रही ठहरे। तुरन्त पार्टी से उठ गये और बोले—मैं यह नियम-विरुद्ध कार्य कभी सहन नहीं कर सकता। हमें यहाँ के हर नियम को पालन करना चाहिए। स्वराज्य प्राप्त करने के लिए बड़े से बड़ा त्याग आवश्यक है। इन हरकतों से कभी देश स्वाधीन नहीं हो सकता। और यह कह कर वहाँ से चले आये।

बहुत से अक्ल के कोल्हू कह दिया करते हैं—पता नहीं, राजाजी को क्या हो गया है, बौखलाए-से रहते हैं। कभी पाकिस्तान के नारे लगाते हैं, कभी लीग से प्यार जताते हैं। कभी अगस्त-प्रस्ताव को धता बताते हैं, तो कभी मि० जिन्ना के दरवाज़े पर धूनी रमाते हैं। कभी कम्युनिस्टों से यारी जोड़ते हैं और कभी कांग्रेस से नाता तोड़ते हैं।

कहनेवाले तो मुँह फाड़ देते हैं; राजाजी का कलेजा जानता है, अपने घाव की टीस को। कांग्रेस ने जब से मिनिस्ट्रियाँ छोड़ी हैं, तभी से राजाजी का हाल बेहाल है। तभी से ऐसा सदमा बैठा है, कि न दिन को चैन आता है, न रात को नींद। करवटें बदलते और आहें भरते ही रात निकल जाती है। गद्दी छिन जाय और चोट न लगे। दिल न हुआ, पत्थर ही हो गया। भाड़ में जाय अखण्ड भारत, और अगस्त-प्रस्ताव। जी सुखी, तो जहान सुखी। जब अपना ही जी ठिकाने नहीं, लोग-दुनिया से क्या लेना-देना। इसके सिवा मिनिस्ट्रियों से ही मुल्क का भला होना है, जिसे केवल मुल्क के भले का ही पागलपन है, वह भला बिना मिनिस्ट्री कैसे मन ठिकाने रखे।

जो आदमी राज्य करने को ही पैदा हुआ है, उसे बलात् संन्यासी बनाया जा रहा है। यह तो सरासर अमानवता है—घोर अत्याचार है। गाँधीजी तो ठहरे वैरागी महात्मा। १०-१२ खजूर खा लिये और बकरी का दूध पी लिया। एक लँगोटी लगा ली, काम चल गया। पर राजा लोगों का काम तो इन बातों से चलनेवाला नहीं। क्या खेल बना रखा है। कभी मिनिस्ट्री गले लगाते हैं, कभी डसे ठोकरें लगाते हैं। राजाजी को यह सब-कुछ पसंद नहीं। धरे राज्य करना शुरू किया तो जीवन का कुछ ज़ायक़ा भी लो।

अभी तक लोगों की समझ में यह भी नहीं आ रहा है कि राजाजी बी-मुसलिम लीग से इतनी दोस्ती क्यों कर रहे हैं। राजाजी बचपन से ही रोमांटिक हैं। वे ही रोमांस के खेल आप राजनीतिक जीवन में खेलने का शौक़ रखते हैं। बुढ़ापे में प्यार! प्यार बुढ़ापा-जवानी नहीं देखता। दिल ही तो है, बस में रहा, न रहा।

लीग से इतना प्रेम बढ़ जाने का मनोवैज्ञानिक कारण भी है। मिनिस्ट्री छिन जाने के कारण उदास, काँग्रेस से हिरास और गाँधीजी से निराश राजाजी को दिल बहलावे को भी तो कोई अवलम्ब चाहिए। जिसके सीने में पत्थर नहीं है, दिल है, उसे तो प्यार भरा सहारा चाहिए ही! और यह प्राकृतिक सत्य है कि निराश आदमी को दुखी दिनों में जिससे थोड़ी भी मुसकान मिल जाय, उसके प्रेम-जाल में आदमी जान बूझकर फँस जाता है। इसी से घायल दिल को चैन मिलता है। इसके सिवा अगस्त १९४२ में सब कांग्रसी जेल चले गये, आप रह गये अकेले! आँखें लड़ाने का मौक़ा मिल गया। और जब आँखें चार होती हैं तो मुहब्बत हो ही जाती है।

पिछले दिनों लीग की बगिया में राजा जी और बी मुसलिम लीग की खूब आँख-मिचौनी रही। ज़नाना-बाग़ में ही यद्यपि इसका रोमांस विकसित हुआ, फिर भी कुछ ताक-झाँक करनेवालों ने ख़बर दी कि एक दिन दोनों ने एक दूसरे से होली भी खेली और प्रेम-पिचकारियाँ चलीं। एक बार राजाजी ने प्रेमातुर होकर लीग का हाथ दबाकर कहा—ओह! भाभी!

लीग उछल पड़ी, और कहा—उई! मेरे देवर!

कहते हैं तभी से राजाजी लीग पर जान देते हैं। उसी दिन से आप पाकिस्तान के पक्के समर्थक हैं। सुना है, आपने एक दिन चम्पा-कुंज में लीग की नशीली आँखों में अपनी पुतलियाँ डालकर वादा कर दिया है कि अगर मेरे दम में दम है तो मैं बड़े भैया मि० जिन्ना को पाकिस्तान का बादशाह बनाकर छोड़ूँगा, तुमसे जो नाता जोड़ा है, वह टूटने का नहीं है भाभी!

तो क्या राजाजी लीग की मुहब्बत में पड़कर मुसलमान बन जायँगे? इस प्रश्न का उत्तर हम नहीं देंगे। पर प्रेम में धर्म-ईमान क्या! प्यार कुछ ऊँची चीज़ है, और यह धर्म-मज़हब यहीं की! इसके सिवा राजाजी यह अच्छी तरह समझते हैं कि पाकिस्तान बिना हिन्दुस्तान आज़ाद नहीं हो सकता। और हिन्दुस्तान की आज़ादी के लिए राजाजी चाहे जो कुछ करने को सदा तैयार हैं चाहे कांग्रेस को छोड़कर लीग से ही दोस्ती क्यों न करनी पड़े।

दक्षिण भारत में आपका अनोखा प्रभाव है। इस मामले में आप पूरे मौलिक आदमी हैं। ५० प्रतिशत मनुष्य समझते हैं कि राजाजी ही भारत की नाव किनारे लगा सकते हैं। और इतने ही प्रतिशत मानते

हैं कि यह देश की लुटिया डुबोये बिना चैन न लेंगे। आपके भोंदू भक्तों का विश्वास है कि आप जो कुछ भी मुँह से उगलेंगे, सोलह आने सत्य होगा। आलोचकों की आस्था है कि राजाजी असत्य के सिवा धोखे में भी और कुछ नहीं बोल सकते। कुछ कहते हैं, इनकी नीति बेबुनियाद है। कुछ कहते हैं इनको समझनेवाला अभी पैदा ही नहीं हुआ। राम जाने, होगा भी या नहीं।

राजाजी अच्छे कहानी लेखक हैं। राजनीतिज्ञ से ज़्यादा वकील हैं। हर बात में मालूम होता है आप अपने केस को किसी जज के सामने साबित करने के लिए, सर और मुँह की कसरत कर रहे हैं। बात इतनी घुमा फिराकर कहेंगे कि सुननेवाले के पल्ले कुछ भी न पड़े। सीधी बात कहें तो बात का स्वाद ही क्या!

जब बात करते होंगे तो ओठ कुछ कह रहे होंगे, जीभ कुछ और ही हरकत कर रही होगी, आँखों में कुछ और ही भाव खेलते होंगे। दिल में कुछ और ही विचार उन बातों को मुँह के मार्ग पर धकेल रहे होंगे। आँखों पर काला चश्मा नैनों के इशारे कभी भी किसी को न समझने देगा।

पीने की चीज़ों में उबलती हुई काफ़ी पीने का ख़ास शौक़ है—कभी-कभी कच्ची ताड़ी भी पेट पिटारी में पहुँचा दिया करते हैं। चर्चा के विषय में इतना ही चाहते हैं कि कम से कम ब्रिटिश पार्लियामेण्ट में सप्ताह में सिर्फ़ सात दिन आपकी अक्ल की चर्चा हो जाया करे। इस से कम एक भला मनुष्य चाह भी क्या सकता है जिसने जीवन अपने देश की सेवा में गला दिया हो।

: : यह बहुरुपिया : :

लम्बाई-चौड़ाई, ऊँचाई मोटाई सभी में आप उदाहरण हैं। आप हैं; मौलाना फ़ज़लुल हक़, बंगाल के वीर। शरीर की उन्नति बेरोक होती जा रही है—ख़ूब चर्बी चढ़ती जा रही है। पेट अचकन के बटनों की जड़ें हिलाये देता है--बटनों के बंधन तोड़ बेतरह बाहर निकलता आ रहा है। गालों की कौन कहे, पलकों तक पर मांस का पलस्तर हो रहा है। मुँह पर वरम चढ़ा है, जैसे सौ—दो सौ भिड़ों ने काटा हो। मोटाई के बोझ से पलकें झुकी जाती हैं, मानों ठर्रा चढ़ाई हो। शक्ल देखकर प्रश्न होता है, मियाँ रोये क्यों देते हो? उत्तर मिलता है, नहीं यार, सूरत ही ऐसी है।

राजनीतिक जीवन में आपने बड़े-बड़े रंग बदले हैं—अनेक प्रकार की चाल दिखाई है। आप पूरे राजनीतिक गिरगिट हैं। पोलिटिकल बहुरुपिया हैं—बड़ों बड़ों को चकमा दिया और वक़्त आने पर अपना काम बना लिया। जिधर ढाल देखा पानी की तरह बह गये। शायद नहीं; निश्चय ही, जितना शरीर मोटा है, उतनी अक्ल मोटी नहीं है। तभी तो मौक़ों से फ़ायदा उठाया है। आपका न कोई सिद्धान्त न उसूल—जैसी बहे बयार, पीठ तैसी ही दीजे!—लोग आपके बारे में ऐसा कहते हैं।

आप पल-पल में पलटते हैं, क्षण-क्षण में रंग बदलते हैं और घड़ी घड़ी बहुरूपियापन दिखाते हैं। पर इसमें बुराई क्या! यह तो आपकी अक्ल का करिश्मा है। कहते हैं, बंगाल में लोग जादू जानते हैं, और जादू से किसी को पल में बकरा तो पल में शेर बना देते हैं। हम तो मौलाना फ़ज़लुल हक़ के इस बहुरूपियापन में बंगाल का जादू देख रहे हैं। हक़ साहब ज़रूर जादू जानते हैं, तभी तो एक पल में बकरा और दूसरे में शेर बनते रहते हैं। मालूम होता है, इन्हीं ने अपने जादू की शक्ति से उड़नखटाऊँ पर बैठाकर सुभाष बाबू को ग़ायब किया था!

बहुरूपियापन एक बहुत भारी कला है। भारत में पहले इसका बड़ा मान था। चाणक्य की सारी सफलता इसी कला पर निर्भर थी। मज़ाक़ तो नहीं, नया रूप धरकर लोगों को धोखा देना और विश्वास दिलाना भारत से बहुत-सी विद्याएँ ग़ायब होती जा रही हैं, उसी तरह बहरूपियापन की कला भी आजकल बहुत ही कम दिखाई देती है। अब कहाँ हैं वे आदर्श और सफल बहुरुपिये, जो बड़े-बड़े राजों-महाराजों को चकमा देते थे। उनसे लाखों रुपयों का इनाम पाते थे। उसी भारतीय कला को मौलाना फ़ज़लुल हक़ सुरक्षित रखे हुए हैं! भारतीय कलाओं के लिए आपके हृदय में कितनी सच्ची मुहब्बत है—कितना दर्द है! काश कोई समझ पाता!

मौलाना फ़ज़लुल हक़ कला और राजनीतिक दृष्टि से बहुत-से रूप धारण कर चुके हैं। भारतीय राजनीति की भिन्न-भिन्न गलियों से गुज़रे हैं। राष्ट्रीयता की खुली, साफ़-सुथरी सड़क पर भी आपने हवा खाई है और साम्प्रदायिकता की तंग गलियों में भी बड़े शौक़ से आप नाक

यह बहुरूपिया

आगे करके दुर्गंध सूँघते फिरे हैं। कांग्रेस, लीग, प्रजासभा सभी का ज़ायक़ा आप ले चुके हैं। लोग कुछ भी कहें, हम तो हक़ साहब को कला का सच्चा पारखी कहेंगे। आप तो वास्तविकता की खोज में हैं। सचाई के दीवाने हैं, साहित्य के परवाने हैं। रहस्य पर बावले हैं, अन्तर को परखने के लिए पागल हैं।

जिस तरह बहुत-से कलाकार और साहित्यिक जीवन को ठीक-ठीक समझने के लिए मन्दिर के द्वार पर भी सिर झुकाते हैं, और वेश्या के सामने भी गद्‌गद हो जाते हैं, उसी प्रकार हक़ साहब ने भी राजनीति के रहस्य को जानने के लिए हर गली की ख़ाक छानी है—हर जगह जूतियाँ चटखाई हैं। दिल में एक आग है, सचाई कहाँ है? किस संस्था में घुसने से सच्ची मिनिस्ट्री मिलती है? किसका ढोल बजाने से शोहरत होती है? किसका राग गाने से ज़्यादा अपनाये जाते हैं?

इसी सचाई की खोज—वास्तविकता की तलाश—के लिए हक़ साहब ने इतने रंग बदले हैं। लोग भले ही इसे राजनीतिक दृष्टि से देखें; पर हम तो इसमें कला के लिए सच्ची लगन पाते हैं। हक़ साहब की हर करतूत में, हर कारनामे में, हर हरक़त में हमने तो यही पाया है कि हक़ साहब भारतीय कलाओं के रसिक हैं—एक सच्चे भारतीय हैं।

सुनिये कैसे।—क्षण-क्षण में रंग बदलना, या पल-पल में परिवर्तन होना, सौंदर्य की परिभाषा है। भारतीय साहित्य के ऋषियों ने सौंदर्य की परिभाषा की है, जो क्षण-क्षण में नया रूप धारण करे, वही सुन्दरम् है। उन ऋषियों की आत्मा को प्रसन्न करना है, तो आपको मानना ही पड़ेगा कि मौलाना हक़ के जीवन में सच्चा सौंदर्य है। हक़

साहब तो जीवन का सौंदर्य समेटे फिरते हैं। नीरस और सूखे राजनीतिक जीवन में सौंदर्य की मिठास न हो तो, एक भावुक हृदय आदमी पागल हो जाय! क्या आप हक़ साहब को एक ही नीरस जीवन में रखकर पागल बनाना चाहते हैं?

राष्ट्रीय जीवन के कटु फल तो क्या, रोज़-रोज़ खीर भी नहीं खाई जा सकती। ज़ायक़ा बदलते ही रहना चाहिए, अगर मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य ठीक रखना है। मौलाना साहब साहित्य जानते हैं, कला को पहचानते हैं, साथ ही मनोविज्ञान भी उन्होंने ख़ूब पढ़ा है। और मनोविज्ञान के अनुसार मनुष्य परिवर्त्तनशील स्वभाववाला प्राणी है। जब मनुष्य परिवर्त्तनशील स्वभाववाला प्राणी है, तो हक़ साहब एक ही जीवन में कैसे रह सकते हैं। अगर रहें तो मनोविज्ञान को झूठा साबित करें। इसलिए वह तो अपना जीवन मनोविज्ञान के अनुसार बनाए हुए हैं।

एक बात और भी है—कभी राष्ट्रीय, कभी मुसलिम लीगी, घोर साम्प्रदायिक, कभी स्वतंत्र और कभी खिचड़ी पार्टी के सदस्य सभी कुछ हक़ साहब बनते रहते हैं। ऐसा करने से मन के भावों को भी बदलना पड़ता है। भाव बदलना बहुत बड़ी कला है। जो अभिनेता जितनी सफलता से भावभंगी प्रकट कर सकता है, वह उतना ही श्रेष्ठ समझा जाता है। हक़ साहब कितनी सफलता से इसे निबाह रहे हैं। तभी तो मैंने कहा कि आप तो कलाकार हैं। कलाकार तो जहाँ जायगा, कला के काम किये बिना न मानेगा!

आप अपने राजनीतिक जीवन में अनेक बार रौब दिखाते हैं, बहुत बार गिड़गिड़ाते हैं, कितनी ही बार मुसकराते हैं, कई बार रोते-चिल्लाते

हैं। पर जिस दल में घुसेंगे, उसका ढोल पीटेंगे, दूसरे को कोरी-कोरी सुनायेंगे, यही आपकी सबसे बड़ी ईमानदारी है। कांग्रेस को छोड़, जिस दिन भी लीग की लीडरी के लिए लपकेंगे; उसी दिन से लीग के राग गायेंगे, कांग्रेस को जली-कटी सुनायेंगे। और जिस क्षण भी लीग को छोड़ बंगाल में कुलीशन (सम्मिलित) पार्टी का मंत्रिमण्डल बनायेंगे, उसी दिन लीग का बुरका फाड़ने के लिए तैयार हो जायँगे। मि० जिन्ना की जन्मपत्री तक की वह धज्जियाँ उड़ायेंगे कि जिन्नाजी को छठी का दूध याद आ जाय।

जिन दिनों आप लीग में थे, आपकी ज़बान पर लगाम नहीं थी। कांग्रेस और हिन्दू सभा को डिक्शनरी देख-देखकर गालियाँ दिया करते थे। उन दिनों रौब भी बड़ा दिखाते थे। हिन्दुस्तान भर में राज्य करने की धमकी तक दिया करते थे। एक बार आपने कहा था—यह बंगाल का शेर अब बता देना चाहता है कि हिन्दू तो उसके सामने गाय हैं। बंगाल का टाइगर अब चुप नहीं बैठ सकता! बंगाल के शेर की दहाड़ से दुश्मनों के कलेजे दहल रहे हैं। आदि-आदि...। बंगाल के शेर की दहाड़, जब हमने पत्रों में पढ़ी तो सचमुच हमारा दिल दहल गया।—हे परमात्मा! कलकत्ता के चिड़ियाघर से इसे बाहर किसने निकाल दिया! अगर इसे फिर पिंजड़े में बंद न किया गया तो कितने ही लोगों को फाड़ खायेगा। उस पर जुर्माना होना चाहिए। ऐसा ख़तरनाक जानवर बाहर छोड़ दिया!

कुछ दिन बाद मालूम हुआ कि मि० जिन्ना ने आपको लीग से निकाल दिया है। पता नहीं, डरकर कि कहीं पंजा न चला दे, या शेरपन की जाँच

करने के लिए ! आप भी कलेजा रखते हैं, फ़ौरन् मुक़ाबले की लीग बनाने की धमकी दी। पर जिन्ना खेला-खाया आदमी है, कब इन बन्दर-घुड़कियों में आने लगा है। वार ख़ाली गया, तो यह शेर जिन्ना के चरणों में जाकर गिड़गिड़ाया, 'चरणों का दास हूँ। ख़ाकसार को माफ़ कर दो। मेरी हस्ती ही क्या क़ायदे आज़म !' गिड़गिड़ाहट देखकर समझ लिया – अरे, यह तो निरा गीदड़ ही निकला। शेर की खाल ओढ़ रखी थी। हत्तेरे की !

थोड़े दिन के बाद हक़ साहब के कान खड़े हुए। मालूम हुआ बंगाल असेम्बली में विरोधी दलवाले मिनिस्ट्री की जड़ में बारूद बिछा रहे हैं। आप प्रधान मंत्री थे। जनाब, इसलिए तो लीग में हैं नहीं कि उसके साथ जान से भी हाथ धो बैठें। फ़ौरन् लीग को धता बताई और डाक्टर श्यामाप्रसाद से मिलकर वहीं मिनिस्ट्री बना ली। आपने उन दिनों राष्ट्रीयता की धूम मचा दी।

पर भाग्य ने साथ न दिया और गवर्नर ने हुक्म दिया कि जनाब गद्दी ख़ाली कीजिए। बंगाल की गद्दी तो गोरों के ग़ुलामों के लिए सुरक्षित है। आप जनाब, इस डाक्टर मुकर्जी के कहने में आकर शरत और सुभाष के गीत गाते हैं। यहाँ तो मीर जाफ़रों का राज्य रह सकता है। गोरे गवर्नर ने किसी की परवाह न करके गद्दी छीन ली और अपने ग़ुलामों को सौंप दी।

गवर्नर की इस हरकत से आपको दिल में भले ही मलाल रहा हो, ऊपर से ख़ूब कोरी-कोरी सुनाई और उसकी बखिया उधेड़ी, लेकिन क्या बनता। भले की, संगत की, गद्दी भी छिनी। ज़िन्दगी तो रहे, फिर हाथ मार लिया जायगा।

फ़ज़लुल हक़ साहब, एक अच्छे बुरे वकील रहे हैं। इसीलिए वकीलों की तरह लड़ना भी जानते हैं। पर हम तो हक़ साहब की हर-एक हरकत में कला ही देखते हैं। कभी शेर की दहाड़, तो कभी गीदड़ की भपकी। कभी बन्दर घुड़की तो कभी चीते का हमला। कभी रौब तो कभी दब्बूपन। यह सब परिवर्त्तन भावभंगी, रंग बदलना, सब कला की दृष्टि से देखना चाहिए। बंगाल के जीवन पर कला का हरपहलू प्रभाव है और उसी कला का प्रदर्शन आप सदा करते रहते हैं। जीवन को सिद्धान्त के बन्धन में बाँधना, उसकी हत्या है। इसीलिए यहाँ तो बेउसूल अक़्ल का इस्तेमाल करनेवाले बहुरूपिये राजनीतिज्ञ हैं।

: : क्रान्ति का दूत : :

मि० एम० एन० राय भी उन लोगों में हैं, जो गुरुजी को धता बता, नया पंथ चलाकर पैग़म्बर बनने के लिए जी-जान एक कर देते हैं। पुराने मज़हब का रोना रोने से लाभ भी क्या! अरे कोई नई राह दिखाओ, चाहे वह गुमराह ही करनेवाली हो। नया वाद चलाओ, चाहे वह बकवाद ही क्यों न हो। कोई नई दानाई दिखाओ, चाहे वह नादानी ही क्यों न हो। पुरानी पोथियों में क्या धरा है—नई कहानी कहने में अक़्ल का पता चलता है—भले ही वह कहानी बिल्कुल नादानी या बेईमानी ही हो!

इसी प्रकार हमारे रायसाहब भी मौलिकता के मालिक हैं। आपकी बातें निराली हैं, लोग उनको आपके दिमाग़ी दिवालियापन की पहचान कहें, तो रायसाहब कब परवा करते हैं। आपकी बेअन्दाज़ अक़्ल को समझने में असफल लोग आपकी खोपड़ी की पैदावार को दिमाग़ी दराड़ कह दिया करते हैं। बहुत-से पोलिटिकल डाक्टरों का मत है कि आपके सिर में दराड़ है—आप एक 'क्रेक' (Creck) हैं। दराड़ न हो तो आपकी खोपड़ी से नई से नई स्कीमें, नये-से-नये विचार भला कैसे निकलें।

हिन्दुस्तान से ज़्यादा आपको बाहरवाले जानते और मानते हैं। वे नेता भले ही न मानें, अपने उपकारी क्रान्तिकारी के रूप में भले ही न जानें। रूस की ओर से आपने चीन, मैक्सिको, दक्षिण अमरीका आदि में बड़ा काम किया। एक समय आप स्टालिन के दायें हाथ थे। आप चले आये, उसका दायाँ हाथ कट गया। बेचारा ठुण्ठा हो गया। कितनी तकलीफ़ होती होगी, बाँयें हाथ से काम करने में। फिर भी उसने अभ्यास ख़ूब कर लिया काम करने का! दायाँ हाथ हिन्दुस्तान में हाथ साफ़ करता रहा और उसने लड़ाई भी जीत ली!

कम्युनिस्ट पार्टी का संगठन करने के लिए आप रूस से चीन भेजे गये। वहाँ आपने कम्युनिस्टों का संगठन करने में अक्ल का इस्तेमाल तो कमाल का किया ही, साथ ही मन मानकर अलाय-बलाय भी खायी। एक दावत में आपको सुअर के बच्चे का कान तक खाना पड़ा। पहले तो बेचारे बगलें झाँकने लगे, पर जब आपको बताया गया कि इसका खाना दोस्ती और इनकार करना युद्ध के लिए चुनौती देना है—किसी तरह आँख बन्द कर दोस्ती निभा ही दी।

मैक्सिको में भी आपने बड़ी-बड़ी दिक़्तें उठाईं, जगह-जगह की धूल फाँकी, राह-राह की ख़ाक छानते फिरे; पर न चीन में की गई कोशिशों की क़दर की गई और न मैक्सिको में काम में लाये गये हथकण्डों का मूल्य लगाया गया। आपने जान लड़ा दी, यार लोग दिल्लगी ही समझते रहे। सबसे ज़्यादा धोखा तो दिया ब्रिटिश कम्युनिस्ट पार्टी ने। श्रीरायसाहब को दूध की मक्खी की तरह निकाल फेंका गया।

रूस की ओर से आप संसार में क्रान्ति करने के अरमान रखते थे।

थे अरमान इरादों में बदल चुके थे। काश! यह पूर्ण हो पाते। लोग मार्क्स को भूलकर रायसाहब पर फूल चढ़ाते और लेनिन को छोड़कर रायसाहब के नाम पर सिर झुकाते। पर दुश्मन लोग रायसाहब की इतनी बढ़ती कैसे देख सकते थे! उन्होंने मार्क्स की माला जपनी शुरू की और रायसाहब की रेड लगाकर ही दम लिया। अब तो उनकी छाती ठण्डी हो गई। संसार भर में क्रान्ति की आग फूँकनेवाले नेता को मिला क्या! सिर्फ़ एक मैक्सिकन संगिनी!! इतना संतोष है कि क्रान्ति की अँगीठी दहकाते समय वह भी दो-चार फूँकें लगा देंगी!

इतना सब कुछ करने पर भी मि० राय का मूल्य अन्तर्राष्ट्रीय बाज़ार के थोक व्यापारियों ने न लगाया। व्यापारी तो क्या मूल्य लगाते, बाज़ार-भाव निकालनेवाले मार्केट-रिपोर्टरों ने भी रायसाहब का साथ न दिया। और दलालों ने वह धोखा दिया कि रायसाहब आज भी उनका मुँह नोच लें, अगर वे कहीं मिल जायँ!

बड़े-बड़े बाज़ारों की कंजूसी, ख़रीदारों की मूर्खता और दलालों की धोखेबाज़ी से नाराज़ होकर रायसाहब क्रान्ति की वह गठरी भारत-जैसे देश में लाये। उद्धव महाराज ने ज्ञान की गठरी गँवार ब्रजबालाओं के सामने लाकर खोल दी। वे तो सब हक्की-बक्की हो गईं। वे भोली ग्वालिन पूछने लगीं—

तुम हो कौन देश के वासी?
कम्युनिज्म रहत है कित दिस
बूझत साँच, न हाँसी।

गँवार देश में भला रायसाहब के ज्ञान को कौन समझे। आपको

झुँझलाहट हुई। निकम्मे, लकीर के फ़क़ीर ! क्रान्ति के दुश्मन ! इन सबको गांधीजी ने ख़राब कर दिया ! लगे रायसाहब गांधीजी को आड़े हाथों लेने ! क्रोध न आये तो क्या हो ! इतनी दूर से चलकर आये, तो भी लोग आपकी बात मानने को तैयार नहीं।

आप तो नेता हैं—क्रान्ति कराना चाहते हैं ! आपने समझ लिया, इस तरह काम न चलेगा। आप विदेशों में अपने धर्मभाइयों के सताये हुए थे ही। ब्राह्मणों ने जिस प्रकार अछूत ज्ञानमार्गियों से नीच व्यवहार किया था, उसी प्रकार आपसे मार्क्स-पंथी लोगों ने भी अछूतपन का व्यवहार किया ! जिस तरह उन अछूत ज्ञानियों—दादू, रैदास, कबीर—ने अपने नये पंथ चलाए, आपने भी यहाँ नया पंथ चलाया रायवाद ! मार्क्सवाद के मुक़ाबले में दूसरा कोई वाद भला ठहर भी कैसे सकता था ! मि० राय को अहिंसा में विश्वास नहीं, यह तो कबूतरों की फ़लास्फ़ी है। असहयोग में आस्था नहीं—यह अक़्ल से दुश्मनी मोल लेना है। अब साम्यवाद में श्रद्धा नहीं—यह समय की पुकार का जवाब नहीं। कांग्रेस में भक्ति नहीं—गांधीजी पैसेवालों के हाथ की कठपुतली हैं। कम्युनिस्टों से आप कोसों दूर हैं, क्योंकि ये काम के नहीं रहे। न किस पर विश्वास, न किसी पर आस्था। आपका विश्वास तो अपने आप में है—आपकी आस्था तो अपने एलानों में ही है और आपकी भक्ति तो अपने कारनामों में ही है।

इसी को कहते हैं 'सच्चा आत्म-विश्वास !' और इसी आत्म-विश्वास के सहारे आपने भारत में रायवाद की नींव डाली। रायवाद की सफलता का इतिहास यों है—रायवाद की पहली जनरल मीटिंग में ७१

क्रान्तिकारी जवानों ने भाग लिया। दूसरी में १३ रह गये। तीसरी में ७ महारथी आये और चौथी में ४ वीरों ने शोभा बढ़ाई। पाँचवीं में कितने आये, पता न चल सका। हाँ, भारत भर में रायपार्टी का रौब ज़रूर छा गया, ऐसा मान लेना ही चाहिए।

युद्ध शुरू होते ही आपने ऐलान किया कि यह जनता का युद्ध है। ब्रिटिश कम्युनिस्टों को बता दिया कि लो देखो, तुम तो हमारी जड़ काटने में लगे रहे थे, हम तुम्हारी, तुम्हारे देश की मदद करते हैं। अब न कहना राय ख़राब आदमी है। इस मौक़े पर आपने कांग्रेस को भी ख़ूब बुरा-भला कहा। पीठ पर सरकार बहादुर थी—कौन कान हिला सकता था।

इस मौक़े से रायसाहब ने चाहा कि काम बना लें पर ये कम्युनिस्ट उनके भी गुरु निकले। उन्होंने इनसे भी ज़्यादा गला फाड़-फाड़कर गोरों का ढोल पीटना शुरू किया! ख़ैर, सरकार अपनी दोनों औलादों के कारनामों से ख़ुश हुई। लेकिन यह कोई भी नहीं बता सका कि सरकार से चाँदी किसने ज़्यादा बनाई। कम्युनिस्ट ज़्यादा हाथ मार ले गये, इसमें शक नहीं, पर रायसाहब भी शक रखते हैं। उन्होंने भी १५ हज़ार महीना लेकर मजूरों में क्रान्ति की भावना भर दी।

रायसाहब अब ज़रूर आशा करते होंगे कि भारत में रायवाद का प्रचार होकर रहेगा। जिसके रौब में आकर सरकार भी इतनी भेंट चढ़ा सकती है; वह वाद भला क्यों न फैले। अब जनता का युद्ध तो बंद हो गया। आगे रायसाहब कहाँ क्रान्ति करायँगे, पता नहीं, पर ये मानेंगे नहीं बिना क्रान्ति कराये। लच्छनों से तो मालूम होता है।

: : भाग्य का हेटा : :

आधुनिक भारतीय नेतागिरी के इतिहास में, लीडरी के लिए गर्मी-सर्दी की ज़रा भी परवाह न करके, दौड़-धूप करनेवाले लीडरों में सबसे असफल अभागा व्यक्तित्व है—पंडित सुन्दरलाल ! इतिहास के आप बड़े ज्ञाता हैं और ऐतिहासिक समझदारी के कोड़ों की मार ने आपको यह जानने के लिए विवश किया कि लीडर बनने का नुस्ख़ा क्या है। लीडरी के इतिहास की आपने बड़ी मेहनत से खोज की। उसके टेकनीक को समझा, लीडर बनने के तरीक़ों का आविष्कार करने में सिर का तेल निकाल दिया; पर तब भी आपका सितारा चमकता नज़र न आया।

आख़िर जिसने लीडर बनने पर कमर कस ली हो, वह अपनी कोशिशों से कब बाज़ आने लगा है। और साहब, दिल की लगी बुरी होती है।

"जाके लगे सोइ जाने बिथा, पर पीर में कोउ उपहास करै ना"

देशभक्ति की आग जिसके दिल की अँगीठी में धाँय-धाँय करके जल रही हो, वह भला क्यों न लीडरी की चाय की चुस्कियाँ लेने के लिए उतावला हो! लाख समझाइये, मगर कभी न मानेगा। बहुत दिन लीडरी की राह में आप धूल उड़ाते फिरे, फिर भी सिरफिरे भारतीयों ने आपको नेतागीरी का शर्बत न पिलाया। पर निराशा कैसी। असम्भव

क्या ! यहाँ इस मामले में नेपोलियन के सगे मौसेरे भाई हैं ।

पंडितजी ने नज़र दौड़ाई, अक्ल की घोड़ी पर सवार होकर, महत्वाकांक्षा की पगडण्डी पर दुलकी चाल से घोड़ी को छोड़ दिया । आख़िर बुद्धि काम कर गई और आपको मालूम हुआ ।—हिन्दुस्तान एक भोंदू देश है, इसमें आडम्बर की पूजा होती है, बनावटी त्याग की तारीफ़ होती है और महात्मापन की मानता मानी जाती है । देखा, गाँधीजी की पूजा इतनी क्यों है ! उसके महात्मापन के कारण ही ! फौरन् दिल में गुदगुदी होने लगी । अब मार दिया हाथ ! बस अब बने हिन्दुस्तान के लीडर । उह ! कितना ज़ायक़ा है लीडरी की याद में ही !

पंडितजी ने खोपड़ी घुटवा डाली और जनेऊ से जान छुड़ा ली; धोती को एकदम घता बताई, प्रेमपूर्वक टाँगों में लँगोटी लगाई । ऊपर से १०॥ गिरह चौड़ी काछनी बाँधी और उसके ऊपर तगड़ी में एक पाव भारी घड़ी लटकाई । ज़रा नीचे खिसकाकर नाक पर चश्मा रखा । शरीर भी सुखाने की कोशिश की और बड़े प्रयत्नों से मुँह पर नक़ली मुस्कान लाने में कुछ उठा न रखा । अब बन गये पूरे डिप्टी महात्मा । नंगे रहने लगे, धूप-शीत सहने लगे । इधर-उधर जाना शुरू किया, महात्मा कहाना शुरू किया ।

इसी प्रकार देश की सेवा में २-३ साल गँवाये; पर 'सेवा करे सो मेवा पाय' वाली कहावत आपके बारे में सच प्रमाणित न हो सकी । मामला कुछ समझ में नहीं आता, सब कुछ किया, लेकिन फिर भी लीडरी के लड्डू खाने का लाभ न मिला । सिर ठोका, अक्ल पर ज़ोर दिया । गांधीजी से मिलान किया । ओह ! यह बात है—गांधीजी का

एक दाँत टूटा हुआ है, और टूटे दाँत की ख़ाली जगह में ही महात्मापन सुकड़ा बैठा है। इस दाँत को कैसे तोड़ा जाय !! परमात्मा ने आपकी लगन से प्रसन्न होकर आपको यह भी वरदान दे दिया। पंडितजी कहते हैं कि यह ग़लत है कि मैंने जानबूझ कर अपना दाँत तोड़ा है। यह तो जीवन का एक एक्सीडेण्ट है। ठोकर लगकर गिरने से मेरा दाँत टूट गया है। पर पंडितजी की भाषा में—शुक्र है उस पाक परवरदिगार का कि दाँत भी वही टूटा, जो गांधीजी का टूटा हुआ है! यह तो संयोग की बात है। भले ही शत्रु का रेडियो ख़बर उड़ाये कि पंडित सुन्दरलाल ने महात्मा बनने के लिए दाँत का बलिदान किया है। अच्छा, किया ही सही, बलिदान तो किया! बिना बलिदान किये तो कुछ मिल नहीं पाता।

पंडित सुन्दरलाल ने बहुत हाथ-पैर मारे, पर क़िस्मत ने साथ न दिया। क़िस्मत भी क्या करे, यह देश का दुर्भाग्य है कि ऐसे आदमी को न पहचान सका और उसको अपना एकमात्र नेता न मान सका। अशिक्षित और उजड्ड देश में उत्पन्न होने से यही तो सबसे बड़ी हानि होती है। न यहाँ लीडरों की पहचान, न नेताओं, विद्वानों और ज्ञानवानों का मान। जो आदमी देशसेवा के लिए उतावला हुआ फिरता है, उसकी क़दर नहीं, और जो ज़रा भी प्रयत्नशील नहीं, ऐसे निकम्मे और आलसियों को लीडरी दी जाती है। इस हालत को देखकर ग़ुस्सा आता है; पर समझदार तरस खाकर रह जाता है।

खेद तो सबसे बड़ा उस घटना पर आता है, जब गणेशशंकरजी विद्यार्थी के स्वर्गवास के बाद कानपुर बिना लीडर के हो गया। और पंडितजी सद्य-विधवा जनता के स्वयंसेवक पति बनने के लिए कानपुर जा पहुँचे।

गांधी-सेवा संघ के बोर्ड को हटाने के मामले पर हिन्दू-मुसलमानों में सिरफुटव्वल की धार्मिक रस्म अदा की जानेवाली थी। आपने वह लेक्चर झाड़ा कि अपनी कमर अपने आप ही थपथपाने को हाथ आकुल होने लगा ; पर जनता ने आपको धता बताई। तब तो आप उल्टे पैरों इलाहाबाद भागे। मतलब यह कि आपने सेवा से पागल होकर अपने को ऑफ़र किया ; पर उजड्ड जनता इनको पहचान न सकी। लीडरी आपको न मिली। समझ में नहीं आता, इसे कानपुर का दुर्भाग्य कहें या आपका।

आप कमाल के व्याख्याता हैं। भाषण-कला आपकी मौलिक है, महात्मापन भले ही नक़ल किया हुआ हो।

व्याख्यान में दोनों हाथ कंधों की सीध में फैलाकर जब जोश में आकर स्टेज पर पैर पटकते हैं, तो ग़ज़ब का ठुमका लगता है। जब भारतीयों की बुद्धि पर आलोचना करते हैं, तो खिसियाकर किसी का मुँह नोच लेना चाहते हैं। जब इस्लाम-धर्म के तत्वों को बयान करते हैं, गद्गद हो जाते हैं। ईसाइयों की तारीफ़ करते हैं, तो रोये-से देते हैं और जब हिन्दू-शास्त्रों पर बोलने लगते हैं, नंगे बदन पर ढकी चादर को उतार फेंकते हैं और मालूम होता है कि अब कुश्ती लड़ने को तैयार हैं। पोज़ से मालूम होता है, आप कह रहे हैं—खड़ा तो रह तेरी ऐसी की तैसी ! अबे हिन्दू शास्तर !

आप भाषण करते समय रोते हैं, गाते हैं, क्रोध करते हैं, करुणा दिखाते हैं, ठुमका लगाते हैं, चकई की तरह घूम घूम जाते हैं—सब कुछ करते हैं; पर एक काम नहीं करते यानी स्थायी प्रभाव नहीं डालते।

आप एक सफल एक्टर हैं। इतनी शीघ्र भाव-भंगी और अंग-संचालन में कोई भी अभिनेता आपकी तुलना में नहीं ठहर सकता। लीडर बनने की अपेक्षा आप एक्टर बनते तो आपका और आपके देश का अधिक हित होता! जोश के कुछ ही क्षण बाद आप भाषण करते-करते आँखों में बिना शहद लगाए रो सकते हैं—इससे अधिक सफलता और क्या हो सकती है।

हिन्दू-मुसलिम एकता के मामले में आप गाँधीजी से भी कोसों आगे हैं। मुसलमानों की चिलम भरने में भी आप एक नम्बर उस्ताद हैं। इस पर अगर मुसलमान उनको सिजदा न करें, तो उनकी कृतघ्नता। उनको ख़ुश करने के लिए आप हिन्दी की हिमायत छोड़ उर्दू का राग अलापते हैं, भले ही स्वर बेसुरा हो जाय। गाने की बजाय चाहे रम्भाने लगें, पर बाज़ न आयेंगे।

आपका लिपिज्ञान ग़ज़ब का है। रोमन में आप सायण भाष्य पढ़ने की हठधर्मी करते हैं। फ़ारसी लिपि को ३ दिन में सिखाने का दुस्साहस भी कम नहीं है। हिन्दुस्तानी के आप पक्षपाती हैं और रेडियो से हिन्दी के लिए माँग करना आप 'दो राष्ट्र सिद्धान्त' बताते हैं; लेकिन हिन्दी प्रान्तों में सबको उर्दू पढ़ाने की माँग कौन सा सिद्धान्त है, यह पूछा जाय तो आप खोपड़ी खुजलाने लगते हैं। अपने ही सिद्धान्त का अपने ही भाषण में विरोध करना आपकी सबसे बड़ी दृढ़ता है और अपने को ही अक़्ल का ठेकेदार समझना आपका सबसे बड़ा आत्म-विश्वास!

आपकी खोपड़ी में जनून की लम्बी जड़ें जमी हैं, पागलपन का

पेड़ खड़ा है। जंगलियों का जोश आपकी रग-रग में रगड़ पैदा करता रहता है। बेबुनियाद आत्म-विश्वास, असफल प्रयत्न, नासमझी-भरी नक़ल और गुमराह मुसाफ़िरी के आप आदर्श नमूने हैं। नाम जितना मिला, बदनामी उससे ज़्यादा कमाई। लीडरी न मिली तो जिन्ना की तरह खिसियाई बिल्ली खम्भा नोचने लगी। मुसलमानों की एल० टी० करनी शुरू की, पर वे भी पंडितजी को गले न लगा सके। सब पहलू देख लिया—गिरह ही ख़राब हैं जन्मकुण्डली में!

रहिमन चुप ह्वै बैठिये,
समझि दिनन के फेर।
दिन फिरिहैं तो लीडरी,
मिलत न लागे बेर।
सब्र करो महाराज!

: : पंजाब की नाक : :

आप सर छोटूराम हैं।

शक्ल से बनिया, जैसे बेचते हों, हल्दी-मिर्ची-धनिया; पर न तो यह हल्दी-धनिया बेचनेवाले बनिया हैं और न बजाजा करनेवाले शाहजी। यह तो असल जाट हैं—ठोस चालीस सेरे जाट। जाट भी वह जाट नहीं कि किसी ने कहा—जाट रे जाट, तेरे सिर पै खाट। जो तड़ाक से उत्तर दें—तेरे सिर पै कोल्हू। वह कहे, तुक तो मिली ही नहीं। तो कहा जाय—बोम्बा तो मरा। चौधरी सर छोटूराम ऐसे जाट नहीं हैं। आप किसी दूसरे ही टाइप के जाट हैं। यानी अगर कोई कहे—जाट रे जाट, तेरे सिर पै खाट, तो चटाक से उसके मुँह पर चाँटा रसीद करें—तेरे सिर पै अशोक की लाट। तुक भी मिल गई और दुश्मन बोम्बा भी मरा।

मसल मशहूर है—बेपढ़ा जाट, पढ़ा जैसा और पढ़ा हुआ जाट, ख़ुदा जैसा। इस उक्ति का आप पक्का प्रमाण हैं। आप भी ख़ुद पूरे ख़ुदा हैं। बल्कि ख़ुदा के भी बड़े भैया।

आपका अवतार जाटों के लिए वरदान और बनियों के लिए अभिशाप है। कहते हैं, ब्रह्मा ने इस दुनिया में धकेलते हुए चौधरी सर

छोटूराम को इनके भाग्य का रक्षा (पास) देकर कहा था, 'जा बेटा, बनियों को बरबाद कर, जाटों को आबाद कर। दुनिया में जाकर अच्छे-बुरे काम कर और ख़ूब पैदा नाम कर ! तेरे भाग्य का सितारा कहता है कि बदनाम होकर भी नाम कमायगा। तुझसे बनियों का नाक में दम रहेगा, व्यापारियों को तेरे अवतार का सदा ग़म रहेगा। बनैनियाँ तुझे कोसा करेंगी और जाटनियाँ सदा तेरे गीत गाया करेंगी !—वही आज हो रहा है। सर छोटूराम आज ब्रह्मा की वाणी को सही साबित करने में लगे हुए हैं।

इकहरा लम्बा शरीर, पतली खिंची हुई आँखें, पतले-पतले ओठ, सफ़ेद खस्सी आर्यसमाजी मूछें, चेहरे पर उम्र के पैरों के निशान, छोटा-सा मुहँ, और धारीदार चेहरे पर एक लम्बी-सी ऊँची-सी मोटी-सी नाक ! जैसे कटे हुए खेत में बिटौरा खड़ा हो ! सिर पर बड़ा सा साफ़ा, धड़ में अचकन, टाँगों में तंग पाजामा आप पहनते हैं। आप जूते और मोज़े भी पहनते हैं। हाथ में छड़ी भी रखते हैं।—यह है आपकी पहचान !

वेशभूषा की पहचान से शायद आप कभी धोखा भी खा सकते हैं, मुमकिन है, और भी कोई इसी प्रकार का व्यक्ति मिल जाय और आप उसको सर छोटूराम समझकर उसका सम्मान बढ़ा दें ; पर नाक की पहचान याद रखिए। यह तो चौधरी छोटूराम की शान की घोषणा करनेवाला टावर है। चाहे जितने आदमी बैठे हों, आप आँख मीच कर सबकी नाकों को टटोल जाइए, जिसकी नाक आपकी मुट्ठी से बाहर निकल जाय, समझ लीजिए, उसी के मालिक सर छोटूराम हैं !

इनकी नाक जिस समय गौरव से सिर उठाकर चलती है, दूसरी

नाकें तो शर्म के मारे बैठ जातीं हैं। इनकी नाक की नाप-तोल देना असम्भव है। नाक का सम्बंध स्थूल आकार-प्रकार से तो है ही, सम्मान और पोज़ीशन से भी है। नाक का अर्थ है इज़्ज़त और इज़्ज़त की इंच-फ़ीट-गज़ों में नाप-तोल नहीं हो सकती। बस, यही कहा जा सकता है कि आपकी नाक बहुत ऊँची है—चेहरे की बस्ती का ऊँचा मचान!

ऐसे समय देश की आज़ादी की याद सचमुच तड़पा देती है। न हुई इतनी लम्बी नाक किसी स्वतंत्र देश में कि इसकी पूजा होती! नाक प्रतियोगिताएँ की जातीं; नाक नुमायशें लगतीं, पत्रिकाओं के नाक-नम्बर निकलते, बीमा कम्पनियाँ नाक-रक्षा बीमा करने के लिए दौड़ी-फिरतीं, नाक को हरेक जायज़ नाजायज़ नुकसान से बचाया जाता! यह सब स्वतंत्र देशों की बातें है, हम पराधीन भारतवासी नाक की महिमा क्या जानें। हम तो 'नेति-नेति' कहकर ही सन्तोष करते हैं। और ईश्वर से सदा यही प्रार्थना कर सकते हैं कि हे भगवान्, यह नाक सदा राज़ी खुशी रहे!

सर छोटूराम के पतले-पतले बारीक ओठ जब कैंची के फलकों की तरह चलते हैं, तो सैकड़ों कलेजों का आप्रेशन कर डालते हैं। ये खिंची हुई पतली आँखें बनियों की तरफ़ इस तरह हिंसक विश्वास के साथ देखती हैं, जिस तरह बिल्ली चूहों की तरफ़। बुडढी आँखें तुरन्त ताड़ जाती हैं कि व्यापारी कितने इंच अधिक फूल गये हैं और मोटी पगड़ी से सुरक्षित खोपड़ी में क्रीड़ा करनेवाली बुद्धि कोई जोड़-तोड़ ऐसा करती है कि बनियों की फूली हुई तोंदें पटक जाती हैं, वे बनिये बरसों का खाया-पीया उगल देते हैं।

आप सर छोटूराम हैं, मुँह आपका छोटा है; पर उस छोटे से मुँह में गज़ भर की ज़बान है। जब वह लपलपाती हुई चलती है, तो दायें-बायें नहीं देखती। नुकीली टोपियों से आपको ख़ास चिढ़ है। इनको कोसे बिना आपका पेट अफर जाता है और खट्टी डकारें आने लगती हैं। इन गजी की नुकीली टोपियों की तारीफ़ सुनते सुनते जब आपको अपच हो जाता है, तो आप इनको जली-कटी सुना कर जुलाब लेते हैं। कांग्रेस को गालियाँ देकर आपके पेट का दर्द ठीक हो जाता है। कहते हैं, अगर आप ऐसा न करें, तो जान पर आ बने! बेचारे दवा के तौर पर ही ऐसा करते हैं, वैसे आपको किसी से क्या लेना-देना।

राजा के सेक्रेटरी से टीचर, टीचर से प्लीडर, प्लीडर से लीडर, लीडर से एडीटर और एडीटर से मिनिस्टर! प्रगति के पथ पर कैसी सरपट चाल दिखाई बेलगाम बछेरे की तरह! जब ख़ुद ही कभी लगाम नहीं लगाई चौधरी साहब ने, तो बेगुनाह बेचारी ज़बान पर क्या लगाम लगायें! आपकी ज़बान बेलगाम दौड़ती है। बूढ़े की जवान पत्नि की तरह आपकी ज़बान पूर्ण स्वतंत्र है। कुछ दिन वकालत भी की है, इसलिए भी ज़बान की जवाँमर्दी दिखाने में चौधरी साहब अपनी मिसाल आप स्वयं ही हैं।

गणित में आपका दिमाग़ बिल्कुल दिवालिया है। बनियों से आपको घृणा है, तो बनियों के गुणों से भी होनी ही चाहिए। हिसाब-किताब (गणित) को इसीलिए आपने अपने सिर में जगह नहीं दी। गणित के मामले में आप सदा बगलें झाँकते रहे हैं। गणित आपको आता नहीं, तो भी गिन-गिनकर बनियों का शिकार करने की ताक में आप

रहते हैं। हिसाब-किताब आप जानते ही नहीं; तो भी उनकी आमदनी का हिसाब रखने में बड़े से बड़ा मोर्चा लेने को तैयार रहते हैं। वैसे आपको राग-द्वेष किसी से भी नहीं। बनियों के हित के लिए ही वह ऐसा करते हैं। बनिये मालदार बनेंगे, उनको चोर तंग करेंगे, रातभर परेशान रहेंगे। खा-खाकर बहुत चर्बी बढ़ जायगी, तो स्वास्थ्य ख़राब हो जायगा, डाक्टरों के दरवाज़ों पर बैठना पड़ेगा। ऐसा मौक़ा ही क्यों दिया जाय कि उनको इतनी दिक़्क़तों में पड़ना पड़े। इसीलिए सर छोटूराम उनके पास पैसा होने देना नहीं चाहते! अब तो बनिये उनको अपना हितू समझेंगे।

बनियों के भी आप हितैषी हैं, और किसानों (ज़मींदारों) के भी। ज़मींदारों की हिमायत करने के लिए आप बड़े से बड़ा ओहदा लेने के लिए तैयार हैं। ज़मींदारों का भला हो जाय किसी तरह, चाहे आपको पंजाब का प्रधान मंत्री ही कोई क्यों न बना दे। जाटों के जन्मसिद्ध अधिकारों की रक्षा के लिए आप मिनिस्ट्री भी छोड़ने को तैयार नहीं। ज़रा इस पर कोई नज़र तो गड़ाये कि सर छोटूराम काट खाने को न दौड़ें तो कहना!

कई लोग कहते हैं—गोली बीस क़दम, तो बन्दा तीस क़दम। १९२० में जब कांग्रेस ने असहयोग का प्रस्ताव स्वीकार किया तो सर छोटूराम ने रोहतक-ज़िला-कांग्रेस के प्रधान-पद से त्यागपत्र दे दिया। इसी घटना को लेकर लोग समझते हैं, 'गोली बीस क़दम तो बंदा तीस क़दम' के चौधरी छोटूराम माडल हैं। यह बात ग़लत है। ८४ लाख योनी के बाद, सो भी न जानें कितने पुण्यों से, मानस जनम मिलता है। इसे

यों ही किसी से असहयोग करके गधा देना सोलह आने मूर्खता है। और साहब, भाड़ में जाय ऐसा सोना जिससे टूटें नाक-कान! साथ ही त्यागपत्र इसीलिए नहीं दिया कि चौधरी जी उन दिनों कायर थे। त्याग पत्र इसलिये दिया था कि जीवन में कोई त्याग तो कर जायँ। लोग यह तो न कहेंगे कि चौधरी साहब ने जीवन में त्याग नहीं किया! त्याग किया कि नहीं? कांग्रेस का त्याग किया! क़सम खाने को जगह तो हो गई!

इसके सिवा चौधरी साहब कोई ऐरे गैरे नत्थू खैरे तो थे नहीं, ज़िला कांग्रेस के प्रधान थे! आल इण्डिया कांग्रेस ने चौधरी साहब की पवित्र भावनाओं की इतनी भी क़दर न की! चौधरी साहब असहयोग में विश्वास रखते नहीं, फिर क्यों असहयोग का प्रस्ताव किया? अपनी बात न माने उसके साथ रहे, चौधरी छोटूराम की बला! उसी का बदला लेने के लिए चौधरी साहब कांग्रेस की पिण्डली पर मुँह मारने की ताक में रहते हैं! काश कि एक बार भी किचकिचाकर काट खाते!

चौधरी साहब हिन्दू-मुस्लिम-एकता के सच्चे समर्थक हैं, पर तभी तक जब तक यूनियनिस्ट मिनिस्ट्री बनी रहे। जब मिनिस्ट्री नहीं, तो एकता से फ़ायदा भी क्या।

ख़ैर।

चौधरी साहब जब मिनिस्टर के सिवा मनुष्य होते हैं तो आपकी धजा और ही कुछ होती है। जब प्रसन्न होते हैं, तो हँसकर अपने बनावटी दाँतों की चमक दिखाते हैं, जब जवानी की याद आती है तो पान

खाते हुए बनावटी दाँतों से सुपारियाँ चबाते हैं और उनकी मज़बूती की परीक्षा लेते हैं।

जब जोश आता है, तो कांग्रेस पर बरस पड़ते हैं और ग़ुस्सा आता है, तो बेचारे बनियों की शामत ला देते हैं। घृणा होती है तो पान की पीक वह मुँह बिगाड़कर निगलते हैं, जैसे कास्ट्रैल पिया हो। जब प्यार में आते हैं तो यूनियनिस्ट पार्टी की तारीफ़ करने लगते हैं। जाति सेवा टपकती है, तो जाटिस्तान का नारा लगाते हैं और देशभक्ति परेशान करती है तो 'भारत देश हमारा' कहकर दिल को ढाढ़स दे लेते हैं।

आप भारत के बदनाम नामवर हैं। आप पंजाब की लम्बी नाक हैं। जिसकी छाया में गोरों की ग़ुलामी आसरा लेती है।

शोक है कि चौधरी सर छोटूराम का दिसम्बर १९४४ को स्वर्ग-वास हो गया।

: : पालतू चीता : :

सरदार पटेल कांग्रेस के बाहर और भीतर अपने चाणक्यशाही हथकंडों के लिए प्रसिद्ध हैं। ३१ अक्टूबर १९४५ को आपकी उम्र ७० वर्ष की होती है। आपकी ७१वीं वर्षगाँठ पर श्रीअशोक मेहता ने आपको गुजरात का लौहपुरुष कहा है। वास्तव में आप लौहपुरुष ही हैं। शरीर तो लोहे का है ही, दिल और दिमाग़ में भी लोहा ही लोहा जमा है। टाटा स्टील कम्पनी ने आपको नहीं गढ़ा, और न उसके आप को, लोह की कमी पड़ जाने पर, लोहे के इंजेक्शन ही मिलते हैं। तारीफ़ तो यह है कि अहमदाबाद के मिलमालिकों द्वारा श्रद्धा और भक्ति से भरा सेब और अंगूरों का रस आपके शरीर में पहुँचकर लोहा बन जाता है।

सरदार पटेल ने अपने जन्म से खेड़ा नामक ज़िले की शान बढ़ाई है। इस ज़िले के आदमी गर्म ख़ून, जोशीले जनून और लड़ाका तबीयत के लिए नाम कमाये हुए हैं। सरदार पटेल भी अपनी जन्म-भूमि की परम्परा छोड़कर अपराधी नहीं बन सकते। कांग्रेस में जब-तब आप ज़बानी हाथापाई करने पर उतारू दीखते हैं, बाँहें चढ़ाते हैं, लेकिन गाँधीजी का अहिंसात्मक इशारा आपको शान्त हो जाने के लिए

विवश कर देता है। महात्माजी के आप पालतू चीते हैं—खूब गुर्राते हैं लेकिन जब गाँधीजी कमर थपथपाते हैं तो और भी जोश में आकर पूँछ फटकारते और पंजे मारते हैं।

सन् '१९२८ में आपने बारदोली-सत्याग्रह शुरू किया। उसी साल आप सरदार बन गये! बारदोली की सफलता ने आपको और भी हिम्मत दी। गाँधीजी ने भी सरदार को शह दे दी। आपने राजकोट में भी यह काम शुरू किया। पर राजकोट का ठाकुर ऐसा अजीब बेअदब नासमझ आदमी निकला, उसने न तो सरदार की सरदारी की परवाह की और न गाँधीजी की बकरी की बात मानी। सरदार पटेल जोश में आकर हाथ-पैर मारते ही रह गये—छोड़ो तो सही, मैं इसकी ख़बर लेता हूँ। ऐसी की तैसी तेरी ठकुराहत की! सरदार के सामने सिर नहीं झुकाता। गाँधीजी पूँछ पकड़कर पीछे खींचते हुए समझाते रहे—अरे रहने दे! मेरा चीता! अभी सत्याग्रह के लिए नहीं है सुभीता! देख तो तेरी सखी मेरी बकरी भी मिमिया रही है! इसे छोड़कर राजकोट में न जा! यह तेरे वियोगमें तड़प तड़प कर जान दे देगी। न कीकर के पन्ने चरेगी, न आक की पत्तियाँ खायगी! फिर दूध कहाँ से देगी! अभी से इतनी बेहाल है।

राजकोट के ठाकुर की हिमाक़त पर सरदार को क्रोध तो बहुत आया; पर गाँधीजी का आदेश, साथ ही अहिंसा का उपदेश! इसके सिवा जब सरदार ने बकरी को कातर स्वर में मिमियाते और चिल्लाते देखा तो उनका लोहे का कलेजा भी पानी-पानी हो गया। और उन्होंने राजकोट के ठाकुर को माफ़ कर दिया, वरना उसकी हरकतों से

सरदार इतने नाराज़ हुए थे—उसकी पगड़ी उतारे बिना न छोड़ते। वह चपत लगाते कि गर्दन की नसें बाहर निकल आतीं। साथ ही डर यह भी था कि कहीं वह ठाकुर बकरी हलाल करके न खा जाय। ऐसे आदमी का क्या भरोसा, जो सरदार के सत्याग्रह से भी न घबराये!

गाँधीजी को अपनी बकरी की रक्षा के लिए एक चीता चाहिए, नहीं तो कोई और भेड़िया उठा ले गया तो कुटिया की रौनक और मुँह का ध गया! इसलिए गाँधीजी भी समय-समय पर सरदार को भी कुछ न कुछ खिलाते रहते हैं। उनको उठाया है, खूब उठाया। बारदोली की सरदारी ने इनको कराची कांग्रेस का सभापति बना दिया! राजकोट का ठाकुर टापता ही रह गया। चाहता था, राजकोट में नाकाम-याब करके लोगों को बता दूँ, यह चीता-वीता कुछ नहीं, यों ही ढोल में पोल है।

सरदार पटेल चीता हैं—वीर हैं, बहादुर है, बलवान् हैं, फुर्तीले हैं, गर्वीले हैं—इसलिए चीता हैं। गाँधीजी ने वैसे तो इस चीते को घास और दूध पर ही पाला है। इसको अहिंसा का उपदेश दे देकर परम वैष्णव अहिंसक और शाकाहारी बना दिया है, फिर भी कभी-कभी पुराना संस्कार पागल बना देता है। कभी-कभी यह अहिंसक चीता शाक दूध खाते-पीते उकता जाता है। ज़ायक़ा बदलने के लिए बौखला उठता है। ऐसे मौक़ों पर गाँधीजी की आज्ञा से किसी हिरन या बकरे को मार खाना ज़रा भी अपराध नहीं है।

अभी तक यह अहिंसक चीता दो बकरे मार चुका है। सरदार पटेल ने सिर्फ़ दो मुर्ग़े हलाल किये हैं—एक नारीमैन और दूसरा

डा० खरे। गाँधीजी भी इनकार न कर सके। अगर इसको रोका तो आश्रम की मृगियों पर हाथ साफ़ न करने लगे। गाँधीजी के मुस्कान-भरे स्वीकृति के इशारे ने इसकी हिम्मत इतनी बढ़ाई कि सुभाष की तरफ़ भी जीभ लपलपाकर पंजा चलाया। गाँधीजी की बकरी के लिए सुभाष एक ख़तरा था ही—इन्होंने भी लहका दिया—हाँ हाँ .. शाबाश! लेकिन सुभाष शेर के लिए सवासेर निकला। उसने जो आँखें दिखाईं कि बकरी टरकर मींगनी कर बैठी और में...में...करती हुई कुटिया में भागी। चीता भी पूँछ दबाकर दाँत चाटता रह गया।

सरदार पटेल सदा चीता ही नहीं हैं, मनुष्य भी हैं। कांग्रेस की नीति के २५ वर्षों से यही संचालक हैं। गाँधीजी पर भी इनका रोब है और कांग्रेस में इनका दबदबा है। लोग इनके पास आने से कन्नी काटते हैं। इनके सामने पड़ने से डरते हैं—न जाने कब पूर्व जन्म के संस्कार जाग जायँ! इनकी तो मज़ाक़ रहे या शौक़ पूरा हो, लोगों को अपनी जान से हाथ धोना पड़े! इससे तो दूर ही दूर भले!

सरदार पटेल में दानवी संगठन शक्ति है। और सिद्धान्त से ज़्यादा यह इसे ही महत्व देते हैं। यही इनका बल है। पढ़ते आप बहुत कम हैं और लिखते उससे भी कम। कौन लिखने-पढ़ने की झंझट में पड़े। लोहे का आदमी क्या लिखे, क्या पढ़े। जब आपकी पीढ़ी के लोगों को ईश्वर के सप्लाई-विभाग का हैडक्वार्क दिमाग़ का राशन दे रहा था, तो आप उनको नम्बरवार लाइन में खड़ा करने में रहे और आपको उस दिन दिमाग़ का राशन न मिल सका—संगठन में जो लगे रहे। अगले टर्न से पहले ही आपको धराधाम पर भेज दिया गया।

इसलिए सरदार पटेल दिमाग़ी मामले में असल सरदारजी रह गये।

सरदार पटेल में न गाँधीजी के जैसी दूरदर्शिता है, न जवाहरलाल जैसी दार्शनिक विवेचना, न सुभाष जैसी असीम वीरता और न राजेन्द्र जैसी बुद्धि-प्रखरता। फिर आप में है क्या?—तो भी आप में जो कुछ है, उसका लोहा मानना पड़ता है। समाजवादियों से आप चिढ़ते हैं। उनको मुँह लगाकर अपने अहमदाबादी भक्तों से थोड़े ही बिगाड़नी है। अहमदाबादी मिलमालिक तो श्रद्धा और भक्ति से सरदार पटेल के चरणों में सिर झुकाएँ और ये छोकरे उनको तंग करें! सरदार भला कैसे सह सकते हैं।

सरदार पटेल दिमाग़ से ज़्यादा शरीर पर भरोसा करते हैं। इसीलिए उसकी परवाह भी ज़्यादा करते हैं। आपकी स्वाभाविक मुखमुद्रा में चाणक्य की नीति की झलक मिलती है। बाईं तरफ़ को मुँह करके मुस्कराते हैं, तो अपनी षड्यन्त्रकारिता की सफलता पर गर्व प्रकट करते से मालूम होते हैं। गम्भीर दीखते हैं तो डर लगता है किसकी बारी है बलिदान का बकरा बनने के लिए। पर सरदार पटेल एक बहुत ही शक्तिशाली देशभक्त और गाँधीजी के ईमानदार चेले हैं। आपका बड़प्पन इसीसे प्रकट है कि गाँधीजी इनके रौब में आ जाते हैं। गाधीजी कहते हैं—सरदार मेरे बेटे हैं। और बेटे भी बराबर के, फिर रौब में क्यों न आ जायँ!

: : आम बिना रस का : :

यह श्रीमान् जी अपनी उपमा आप स्वयं ही हैं। गाय के गोबर से लिपे, मुरादाबादी मिट्टी से पुते, कच्चे मकान की तरह साफ़-सुथरे समालोचक, वर की धुली खादी की तरह अछवाये साहित्यिक और बिना अंग्रेज़ी पढ़े कम्यूनिस्ट की तरह विचारक आप हैं। आप हैं—श्री शान्ति-प्रिय द्विवेदी। श्रीअष्टावक्रजी महाराज की कई कलाओं से युक्त, और कई से मुक्त, आपने भारत-धराधाम में अवतार लिया है। शिव की नगरी काशी में रहकर भी आप विष्णु के गीत गाते हैं—आपका कलेजा तो देखिये।

शरीर से आप इकहरे छरहरे हैं और वज़न में हल्के फुल्के। भर्ते के लिए भूभल में भूने हुए भटे की तरह आपकी सुँती हुई पिण्डलियाँ हैं। कन्धों से लटकती हुई पतली पतली बीर भुजाएँ—जैसे हवा निकले हुए साइकिल के ट्यूब। फिर भी इतनी वज़नी कि सुकुमार कन्धे झुक झुक जाते हैं। कमर की ओर निकला हुआ सीना, जुलाब लिया हुआ-सा पेट और पतली कमरिया से मिलकर आपके धड़ का निर्माण हुआ है। कन्धों के बीच में पतली-सी गर्दन पर बुद्धि के भार से भरा हुआ सिर ज़रा एक ओर को झुका-सा रहता है। बुद्धि के भार से या किसी कन्धे के

प्रति विशेष प्रेम,पक्षपात से, यह जानना कठिन है। हाँ, हर समय भय यही बना रहता है कि अब बैलेंस बिगड़ा !—यह है हमारे द्विवेदीजी का मांसल रूप !

आदमी आप बड़े दिलचस्प हैं। देखते ही तबीयत कलेजे से बाहर होने लगती है, दिल क़ाबू की लगाम तोड़कर भागने लगता है और आपसे सत्सङ्ग किये बिना समय का सदुपयोग नहीं होता।

समालोचना में आप जितने नवीन अछूतायेपन में पगे हैं, उतने ही वेशभूषा में प्राचीनता के सकर्मक समर्थक हैं। सिर पर लखनौआ पट्टे, तेल में तले हुए—जैसे जीवन की सारी स्निग्धता सिर में ही समेट रखी हो। इस लखनवी नज़ाक़त के ऊपर राष्ट्रीयता की पताका लहराती है—सिर पर गान्धी टोपी निराली ध्वजा दिखाती है।

हिन्दी-लेखक के लिए चश्मा तो अनिवार्य चिह्न-सा है। सो तो द्विवेदीजी की आँखों की ढाल बना ही होता है। चश्मा होते हुए भी आपकी नुकीली पुतलियाँ साहित्य की तली की खबर लाती हैं। ये नयना बड़ी दूर की कौड़ी लाते हैं, फिर भला इन निर्जीव शीशों के जड़ बन्धनों में बन्दी कैसे रहें। ये पथरायी-सी आँखें चश्मे के शीशे तोड़कर बाहर आने के लिए इतनी छटपटाती हैं, जितना एक प्रगतिशील लेखक साहित्य में गन्द उछालने के लिए।

आपका प्यार और घरबार का नाम है मुच्छन। पर मियाँ मुच्छन के मुँह पर कहीं भी मूँछों का पता नहीं। मैदान साफ़ हो अच्छा। झाड़ियों में क्यों किसी का अञ्चल उलझाया जाय। मूँछों के बवाल से मनुष्य बुद्धि का दिवालिया तथा टेस्ट में कङ्गाल नज़र आता है। उन्न भी

आम बिना रस का

ख़ामख़ाह ज़्यादा मालूम होने लगती है। और कई बार बड़ी उम्र का भ्रम ही जीवन में कई सरस घटनाओं की दुर्घटना होने से रोक देता है। द्विवेदीजी मूँछों का बवाल नहीं पालते और सदा किसी रङ्गीन रस-भरी घटना के स्वागत के लिए तैयार रहते हैं। इतने पर भी यदि कोई रस-भरी अधूरी कहानी जीवन में न आकर झाँकी तो ब्रह्मा की मूर्खता! इसमें द्विवेदीजी सरासर निर्दोष हैं।

आपकी आनन-श्री उस रेगिस्तानी प्रदेश के समान है, जहाँ नख़लिस्तान नहीं। फिर काश्मीरी वसन्त वहाँ क्या आया होगा। वहाँ तो उदासी की एक राष्ट्रीयता ही सदा विराजमान रहती है। समय के थपेड़ों से मुँह काफ़ी चोट खाये हुये है। प्रतिकूल परिस्थिति की लू ने गालों की चिकनाई चाट ली है। दिवालिया सेठों की तरह दोनों गाल मुँह के भीतर की ओर मिलने के लिए अन्दर धँसे जाते हैं। दिवालिये मुँह छिपाकर ही तो संवेदना प्रकट करते हैं।

यह महापुरुष ख़ास बनारस का है; पर आम बिना रस का है। इस बिना रस के आमको साहित्य के पुआल में पकाया गया है। शोषण के बाज़ार में कंजूस साधना इसे बेचने लायी थी, लेकिन स्वयं इसका रस चूसकर इसे आपाधापी की चिलचिलाती धूप में फेंक गयी है। बेचारा आतप का मारा यह चुड़ा हुआ लिचपिचा आम बिना रस का है और यह साहित्यसाधक ख़ास बनारस का है।

फिर भी इसका आत्मविश्वास महान है। डाल से कुसमय टपका, पाल का पका, धूप का मारा बिना रस का यह आम अपने को डाल में झूलते, जोबन में फूलते, गदरे कलमी से कम नहीं समझता। इस पर

कोयल आकर कभी दो पल को भी न कूकी ! अरे, कोकिला न सही, बुलबुल ही आकर पल भर को अपना प्यार जता जाती।

आज द्विवेदीजी समालोचक हैं, दो दिन पहले नशीले कवि थे। लेकिन जब देखा, कविता भी किसी कामिनी के कलेजे में द्विवेदीजी के लिए एक छोटी-सी कोठरी भी रिज़र्व नहीं करा सकती, तो कविता को आपने धता बतायी और झुलसे दिल से समालोचना गले लगायी। प्यार में निराश नर को समालोचकी खूब फबती है, जैसे द्विवेदीजी को।

श्रीमान् शान्तिप्रियजी धड़ में लबादानुमा खादी का कुर्ता तथा ऊपर से ढीलीढाली जवाहर-वास्कट पहनते हैं। सीने के उभार को उकसाने का असफल प्रयत्न करते हुए दोनों कपड़े सिर पटक-पटककर दिन बिताते हैं ! पर उनका सीना कहाँ उभार पाते हैं !

टाँगों में ढीला पाजामा लहराता है। दिवालिया सेठ के स्वामिभक्त नौकर की तरह वह टाँगों की तन्दुरुस्ती को छिपाता रहता है। इस ड्रेस में आपका हाड़-मास-निर्मित शरीर ऐसा मालूम होता है जैसे किसी बड़े से लिफाफे में शोक-पत्र ! आप जिस समय अपनी साधना की धुन में चलते हैं, तो लपझप ! और मालूम होते हैं, कुल मिलाकर पूरे लपुझन्ना !

इस ग़रीब पर कभी यौवन आया नहीं, तो जायगा क्या ! आप इसलिए हैं चिरयौवनमय। उम्र ज्यादा नहीं, सिर्फ ५० वर्ष होगी और आप कभी कम नहीं, सिर्फ २५ वर्ष मानते हैं। यह तो अपनी धार्मिक आस्था है, इसमें दखल देने का किसी को क्या अधिकार ! दिल के मानसरोवर से नसों की गङ्गा-यमुना, गोमती, घाघरा, गण्डक,

सोन आदि नदियों में गर्म लाल पानी बहुत कम आता है। फिर भी किसी परम वैष्णव सुन्दरी के साथ यह छलकती जवानी बिताने का कितना अरमान है! काश, यह अरमान कर्मयोग बन पाता! अरे, कम-बख्त ब्रह्मा, तू ही अपनी बही में रबड़ इस्तेमाल करके दो हरफ़ बढ़ा दे! क्या स्पेशल परमिट नहीं मिल सकती? सरासर एक कलाकार गला जा रहा है, और उसके लिए राशन कार्ड नहीं बनाया जा रहा!

प्रेम-भावना की लाली, आपके दिल की रङ्गीनी, पान की पीक से पुते हुए आपके प्रेम-प्यासे स्निग्ध अधरों पर झिलमिलाती है। मस्ती-भरी जवानी के उच्छ्वासों की सुगन्धि मुँह में घुलते हुए तम्बाकू से उड़ती रहती है। जीवन का मोह और आकर्षण आपके कड़ी किये हुए काले-सफ़ेद पट्टों में रहता है।

व्यावहारिकता में आप काफ़ी से ज्यादा सफल उतरते हैं। पानवाले से पान खरीद लेने के बाद आप थोड़ा-सा चूना और तम्बाकू ज्यादा ले लेने पर व्यापार में लाभ ही लाभ समझते हैं। दूधिया गोला (नारियल की गिरी) अगर एक आने की खरीदनी हो, आप दो-दो पैसे की दो बार खरीदने में ज्यादा विश्वास रखते हैं। इतना सब कुछ होते हुए भी अगर कोई वैष्णव टाइप की कवयित्री आपसे न टकरायी तो उसी की क़िस्मत! उसी ने एक समालोचक हाथ से खोया, द्विवेदीजी का क्या गया!—खैर।

आपकी स्वाभाविकता में झेंप और गम्भीरता में उदासी रहती है। वार्तालाप करते हैं तो रोये-से देते हैं और हँसते हैं तो खिसियाये से मालूम होते हैं। 'ओ' कहकर सम्बोधन करते हैं तो खट्टी डकार सी

लेते हैं और 'अरे !' कहकर आश्चर्य दिखाते हैं तो उबकाई-सी मालूम होती है। सुनते किसी की नहीं, अपनी बराबर कहे जाते हैं। सुनने से ज़्यादा यक़ीन आपको देखने में है। कानों का क्या यक़ीन, न जाने क्या सुन बैठें ! इसलिए आपने कानों का इस्तेमाल ही छोड़ दिया ! भाड़ में जायँ ऐसे कान, जिनसे परम वैष्णव द्विवेदीजी को लोगों की निन्दा-स्तुति सुननी पड़े।

लेखों से प्रेमी छायावादी, धर्म से कृष्णमार्गी वैष्णव, टोपी से गाँधीजी के परम चेले, कुर्ते-बण्डी-पाजामे से कम्युनिस्ट, कुल मिलाकर आप हुए—कृष्णमार्गी वैष्णव छायावादी गाँधीआइट कम्युनिस्ट ! आप कुछ भी हों, हम तो यही कहेंगे, 'श्री शान्तिप्रिय द्विवेदी हिन्दी-साहित्य में न तो दुःखान्त हैं, न सुखान्त; न तुकान्त हैं, न अतुकान्त; वह तो प्रशान्त हैं—पक्के प्रशान्त !'

आम बिना रस का

: : कसरती कलाकार : :

कितने ही कलाकार ऐसे होते हैं, जो 'हाथी के दाँत खाने के और तो दिखाने के और' की कहावत चरितार्थ करते हैं। क़लम से उनको कुछ पायेंगे और शक्ल देखेंगे तो सरासर धोखा खायेंगे। लेखनी से वे सुकुमार सुन्दर सजीले होते हैं और देखने में बिल्कुल बेडौल—बेतुके। ऐसे आदमियों पर धोखादेही के मामले में मुक़दमा चलना चाहिये। यह तो खुल्लम-खुल्ला 'चार सौ बीस' है। ऐसे हरएक आदमी पर सिटी मजिस्ट्रेट की ओर से नोटिस तामील होना चाहिये—'जनाब, आप अदालत में हाज़िर होकर यह बताइये कि क्यों न आप पर 'चार सौ बीस' में मुक़दमा चलाया जाय, क्योंकि आपके मज़मून पढ़कर आपके बारे में जो माने निकाले गये, आप उनसे सरासर उल्टे हैं? आप दुनिया को धोखा देते हैं।' अगर वह शुभ दिन आ जाय और अदालत को ऐसे नोटिस तामील करने पड़ें, तो पहला नोटिस हिन्दी के सुप्रसिद्ध कलाकार श्री भगवतीप्रसाद वाजपेयी को मिले।

वाजपेयीजी का लिखा हुआ कोई उपन्यास या कहानी पढ़ने पर आपकी बारीक कल्पना की कोमल कलाबाज़ियाँ देखकर आनन्दोच्छ्वास में मुँह से ज़बरदस्ती 'वाह-वाह' निकल पड़ती है। उनकी पैनी दृष्टि को

देखकर आप फुदककर कह उठेंगे—'शाबाश रे कलाकार !' कला की सुकुमार तस्वीरें देखकर आपकी उँगलियों की कोमलता, कलाई के लचीलेपन और हथेली के छरहरेपन की तारीफ़ करनी पड़ती है।

लेकिन अगर भाग्य टक्कर खा जाय और मांसल स्वरूप में आपके दिव्य दर्शन होने की दुर्घटना हो जाय, तो दर्शक एकबारगी हक्का-बक्का सा रह जायगा। दिल क़ाबू में करने की लाख कोशिशें करते हुए भी 'वाह-वाह' बड़ी फुर्ती से 'हाय हाय' में बदल जायगी और दर्शक अपना माथा ठोककर चिल्ला पड़ेगा—उफ़ ! तेरा भला हो !.....अरे भले-मानस ! ख़ैर, परमात्मा तुझे आँधी बाय से बचाये !

तभी तो कहा कि कुछ कलाकार ऐसे हैं, जिनकी रचनाओं से उनके विषय में अर्थ कुछ निकलते हैं और वे होते हैं कुछ। उनको एक आशंकापूर्ण भिड़न्त समझना चाहिए।

कलाकार वाजपेयीजी, जिस रूप में साकार वाजपेयी हैं, उस रूप में भी समझ लेना पाठकों का परम कर्तव्य है। आपके आकार-प्रकार, सभी में कलाकार ही कलाकार समाया है। हाँ, तो आपका बड़ा-सा सिर है और पेट भी बहुत तन्दुरुस्त है—इकलौते बेटे की तरह बड़े प्यार-दुलार से पाला-पोसा हुआ। आपकी मोटी खोपड़ी में, यह न समझें, अक्ल भी मोटी ही निवास करती है; बुद्धि आपकी निहायत बारीक है और कल्पना आपकी बे-हिसाब महीन।

आँखों पर चश्मा तो लगाते ही हैं, जैसा कि हिन्दी-लेखकों का मौलिक रिवाज है। ऐनक के पीछे इतनी नुकीली नज़र ! फिर भी क्या मजाल कि शीशे में ज़रा भी दराड़ आ जाय। कहानियों और उपन्यासों

के प्लाट आपकी खोपड़ी में बड़ी बेचैनी से कुलबुलाया करते हैं, कल्पना कुलाचें मारा करती हैं और मौलिकता एड़ियाँ रगड़ा करती है। इसी-लिए अन्दर से बालों की जड़ें खोखली हो गयी हैं। जिस सिर में कला उछल कूद मचा रही हो, उसमें बाल बेचारे जैसी बेकार की चीज़ों को खाद कहाँ से मिल सकती है। बाल खोपड़ी का मैदान छोड़कर कभी के भाग चुके हैं।

जिन हाथों ने साहित्य की चहारदीवारी पर रङ्ग-बिरङ्गी पुताई की है, उनकी क्या बात! उँगलियाँ मिली हुई देखी जायँ तो चप्पू-जैसी जान पड़ेंगी। कोमल उँगलियाँ इतनी मुस्तैद कि जैसे ज़िन्दगी भर रस्सा-कशी की हो। क़लम तो इनमें आकर पनाह माँगती है। और इसी डर से कि अगर देर तक इनमें फँसी रही तो जान चली जायगी, वह सब-कुछ उगल डालती है। कलाई को देखकर सोलहों आने यक़ीन करना पड़ता है कि ब्रह्मा की अक्ल जरूर सठिया गयी है, तभी तो किसी नेपाली के पैर का पञ्जा वाजपेयीजी के हाथ में फिट कर दिया है।

कहानी-उपन्यास के अखाड़े में तो वाजपेयीजी काफ़ी नाम कमा ही चुके हैं, साहित्य के अन्य बाड़ों में भी आप कभी-कभी घुस जाते हैं। आप तङ्ग दरवाज़ों में भी प्रवेश करने का रास्ता खोज निकालते हैं; पर साहित्य की कई तङ्ग गलियों में घुसने पर कष्ट ही होता है लेकिन कायाकष्ट ही तो है, जानजोखों तो नहीं! कष्ट सहने से ही शक्ति आती है।

कहीं-कहीं आप बिलकुल भी फ़िट नहीं हो पाते, चाहे यार लोग आपको मार-मार कर हकीम बना दें। कुल मिलाकर इससे आपको लाभ

ही हुआ। कविता के लिए कसरत करते-करते आपकी भुजाएँ बलिष्ठ हो गयीं। आलोचना के लिए पन्ना पटकते-पटकते उँगलियाँ लौह कीलियाँ बन बैठीं। निबन्ध के लिए एड़ियाँ रगड़ते-रगड़ते पिण्डलियों की पेशियाँ भी उभर आयीं। इतना ही नहीं, अब तो ख़तरा सिर पर मँडरा रहा है कि कहीं आप नाटककार होने की धमकी भी हिन्दीवालों को न दे बैठें! अगर कहीं यह साहित्यिक दुर्घटना हो जाय तो प्रसादजी की आत्मा का श्राद्ध ज़रूर हो जायगा।

हिन्दी के आप कलाकार हैं, इसलिए उसके हिमायती तो आप सहज में ही साबित हो जाते हैं। फिर भी महारानी विक्टोरिया की भाषा से आपको बेहद मुहब्बत है। अपनी रचनाओं के थान पर ज़बरदस्ती के खूँटे से आप अंग्रेज़ी के शब्दों को ऐसा कसकर बाँधते हैं कि बेचारे रस्सा तुड़ाकर भागने के लिए छटपटाते रहते हैं। अंग्रेज़ी शब्दों के प्रयोग करने में आपको ख़ास ज़ायक़ा आता है। साथ ही अंग्रेज़ी के बिना रोब कहाँ! रोब नहीं तो आबरू कहाँ और साहब, आबरू ही तो सब कुछ है। तो आपकी रचनाओं को देखने से निश्चय होता है, आप अंग्रेज़ी के परम विद्वान् हैं। पाठक चाहे ढोल में पोल समझें, पर हम तो अपनी श्रद्धा में ज़रा भी कमी नहीं आने देंगे। लिखने में, सो भी भूमिकाओं में, आप भले ही अंग्रेज़ी की खिचड़ी पकाने में अपना मुँह दर्पण में देख देख कर मुसकराते हों; पर अंग्रेज़ी बोलने की बदपरहेज़ी आप कभी नहीं करते! अंग्रेज़ी से प्यार चाहे जितना हो; पर उसे मुँह नहीं लगाते! चाहे आप वाजपेयीजी को कितना ही उकसायें, जोश दिलायें, ताव पर चढ़ायें; पर श्रीमान्‌जी हनुमान्‌जी की ऐसी क़सम खाकर बैठते हैं कि अंग्रेज़ी में कभी न बोलेंगे। कभी-कभी छुट

कम्युनिस्टों से पाला पड़ जाता है। (जिनकी धर्मभाषा रूसी होते हुए भी जो अंग्रेज़ी की ही टाँग तोड़ा करते हैं।) तब आप खिसियाने से होकर कहते हैं—राष्ट्रभाषा का अपमान ! हिन्दी का त्याग ! अगर तब भी वे बाज़ नहीं आते, तो आप लोटा लेकर संडास चले जाना ही श्रेयस्कर समझते हैं—

हिन्दी-निन्दा सुनइ जो काना,
होई पाप गउ घात समाना।

राष्ट्रभाषा हिन्दी की इतनी लगन !

दिल आपका बड़ा ही नाज़ुक है ! कलेजे में भावुकता ऐसे जमा है जैसे कञ्जूस की तिजोरी में चाँदी। अगर परमात्मा की दया से वाजपेयीजी के किसी परम मित्र को ज़रा खुलकर दस्त आ जाय, तो वाजपेयीजी हड़बड़ाते हुए डाक्टर के पास जाकर अपना सिर पीटते हुए कहेंगे—"हाय डाक्टरजी, ग़ज़ब हो गया !' एक कलाकार का जीवन—! ओह ! उनके जीवन का प्रश्न है। उनको संग्रहणी हो गयी। हाय, दो मिनट पहले तो बिल्कुल ठीक थे। शीघ्र चलिये डाक्टर ! मेरे परम प्यारे डाक्टर। सम्पूर्ण Life का Danger है ! विलम्ब का Chance (मौक़ा) नहीं। मैं सच कहता हूँ—मैं तो चालीस सेरा Realistic हूँ और आजकल तो प्रगतिशील Progressive! ग़लत बात कहने का कोई Chance नहीं। डाक्टर.....डाक्टर ! इतनी देर ! आपको मेरी कहानियों की क़सम जो जल्दी न चलें।—"

अगर आपकी अनुपस्थिति में किसी मित्र को [श्रंचल या सर्वदानन्द को हो तो और भी अच्छा] नकसीर छूट जाय। आने पर ख़ून

की दो-चार बूँदें पड़ी देखकर आप उसकी छाती से लिपटकर रोने-सिसियाने से मुँह से कहेंगे—"क़िस्मत में यह भी लिखा था ! कितना भीषण रोग लग गया ! फिर शरीर में ख़ून कहाँ रहे ! भैया, तेरे सिर की सौगंध, दुश्मन को भी न हो बवासीर ! अरे तुम तो पीले पड़ गये—मनों ख़ून निकल गया ! अब कैसे जीना हो ! हाय मेरे साथी, तुमको यह कब से हो गई !" यह है आपकी भावुकता का हाल।

जब आपका प्यारा पेट मचल पड़ता है, तब उसका हठ हर प्रकार से पूरा करना पड़ता है। एक बार रात के तीन बजे आपका पेट हठ कर बैठा। बेचारे एक मित्र के पास दौड़े आये और बोले—'यार, कुछ है ? पेट में खुजली-सी मची है। अब यह न मानेगा।'

'इस समय ?—मालूम है क्या बजा है ?' उसने ताज्जुब से पूछा।

'अजीब आदमी हो, वक़्त देखें कि अपनी आवश्यकता।' वाजपेयी जी चिढ़कर बोले।

'तो सामने उनके साथ चले जाइये, सभी एक दोस्त के यहाँ हाथ साफ़ करने जा रहे हैं।' उनके दोस्त ने रास्ता बताया। आप भी उस टोली में जा मिले। और पुकारा—यार लोगो यह स्वार्थ ! अकेले ही हाथ मारने चले। हम भी ताड़ने वाले हैं, बचकर निकल जाओ तो·····"

"आइये न, आप भी चलिये।" टोली का लीडर बोला।

सभी लोग उस दोस्त के कमरे पर गये। कपड़े उतारे। लगी गप-शप होने। बहुत देर तक जब खाने पीने का सिलसिला न देखा तो पूछा—"किधर है खाने-पीने का सामान ?"

"खाने पीने का सामान !" किसी ने ताज्जुब किया।

"और क्या ! पाठकजी ने भेजा है कि तुम लोग·····!" आपने कहा।

"हाँ-हाँ हम लोग आज यहाँ सोने के लिए आये हैं। यहाँ तो बड़ा गड़बड़ है।" एक दोस्त ने समझाया।

"बड़ा नालायक है पाठक। क्या चकमा दिया ! कहता था, तुम भोजन पर बुलाये गये हो" वाजपेयी झेंपते से बोले।

"आप भी किस की बातों में आ गये। ख़ैर, कपड़े उतारो आराम से सोओ। सवेरा ज़्यादा दूर नहीं।" एक दोस्त ने सलाह दी।

लोग कितने शैतान हैं कि वाजपेयीजी जैसे सीधे आदमी को तंग करते हैं। और वाजपेयी जी भी कैसे भले आदमी हैं—यानी भलमनसाहत की हद है !

वाजपेयीजी ने जीवन की पगडंडियों पर भी धूल उड़ाई है और आपने साहित्य के महासागर में भी ग़ोते लगाये हैं। आप कहानियों के हीरे और उपन्यासों के लाल निकाल लाये हैं, अगर साथ में कविता की कंकड़ियाँ और समालोचना की सीपियाँ भी निकल आईं तो क्या बुरा ! सीप में ही मोती होता है। इसी आशा से अँधेरे में हाथ मारा था, पर स्वाति का जल उन सीपों में न पड़ा तो वाजपेयीजी का क्या दोष !

आज कल आप सिनेमा क्षेत्र में जमे हैं। उसमें क्या हल चलाते हैं, यह देखने की चीज़ है !

: : हिन्दी का चर्खा : :

आप इन देवताजी को पहचानते हैं न ? नहीं भी पहचानते, तो भी जानते हैं और नहीं भी जानते, तो भी मानते हैं। इनका शुभ नाम है—बनारसीदास चतुर्वेदी। इनको जानें या न जानें, या न पहचानें पर इनको मानना अवश्य पड़ता है। मजबूरी है। अपने हाथ की तो बात नहीं। चमत्कार को नमस्कार है, चौबेजी को क्या। इनको आप क्या नमते हैं, इनके कार्यकलापों को सिर झुकाना पड़ता है। वासलेट घी की तरह आप प्रसिद्ध हैं और प्याज़ की तरह फ़ायदेमंद। हींग के बघार की तरह मशहूर इनके कार्यलाप हैं, सनकियों के समान इनके वार्तालाप हैं। कई मुड़चिरे साहित्यिक कह देते हैं—चतुर्वेदीजी हिन्दी के लिए अभिशाप हैं। यह इतना ही ग़लत है, जितना अहिंसा से स्वाधीनता प्राप्ति का विश्वास।

चतुर्वेदीजी सरासर साहित्यिक हैं। साहित्य का जमघट समझिए! द्विवेदीकाल के गद्य-जैसी खरखरी खस्सी मूँछें, केशव के कवित्त-जैसी भावहीन, फिर भी चमत्कारी आँखें, आँखों पर धरा हुआ छोटे-छोटे शीशों वाला घिसा-घिसाया चश्मा, साहित्य में किसी नये वाद की बकवाद सुनने के लिए चौकन्ने कान, उस पर टीका टिप्पणी करने के लिए

लपलपाती ज़बान ! लापरवाही से रखी हुई सिर पर गाँधी टोपी । ऊल-जलूल कुर्ता और चूड़ीदार पाजामा, जो न ढीला, न तंग ! यही आपकी बाहरी परिभाषा है ।

चलते हैं, तो कुर्ते के छोर हवा में नाव के पाल की तरह फहराते हैं । कुर्ते के बटन लगाना चौबेजी मज़हबी अपराध समझते हैं । कुर्ते का गला मस्जिद के दरवाज़े की तरह हर समय खुला रहता है और सफ़ेद खादी के कुर्ते के नीचे सीने के काले-काले घुँघराले बाल बहार दिखाते रहते हैं । कोई इसे किसी भी रूप में ले; पर हम तो इसको चौबेजी की महान मर्दमी समझते हैं । छाती पर बाल होना मर्दमी की निशानी है, ऐसा "आल्हाखण्ड" में बार-बार आया है । जब एक आदमी सरासर मर्द है, तो वह अपनी मर्दमी क्यों छिपाये ?

सीने पर ज़्यादा बाल होना इस राशनिंग के समय में बड़ा सहायक है । सिर के लिए तेल का राशन मिलता है । सिख लोग अपने सिर दिखाकर चौगुना-पँचगुना राशन ले सकते हैं । आजकल जिसके हाथ जितना ज़्यादा राशन लग जाय, वही अमीर है । चौबेजी अपने सीने के बाल-मण्डल को दिखाकर तेल का राशन लेने में सिखों का मुक़ाबला कर सकते हैं । सीने के बालों में तेल इस्तेमाल करें, तो यह खेती और भी लहराये, अगर न करें तो किसी ग़रीब को देकर पुण्य कमायें !

आपके कुर्ते के काज बेतरह चौड़े रहते हैं । बटन उच्छृंखल न हो जायँ इसलिए चौबेजी कभी कभी उनको कण्ट्रोल में रखने के लिए, दो-दो बदनों के गले एक-एक काज में फँसा देते हैं । बेचारे बटन वहाँ से अपनी गर्दन निकालकर भागते हैं । इसी संघर्ष में काज बेतरह चौड़े होजाते हैं ।

चौबेजी आज-कल कुर्ते के साथ पाजामा भी पहनने लगे हैं। पाजामा चूड़ीदार; पर न ढीला, न तंग। चूड़ीदार, पर ढीला। इसे आप इनका छिछड़पन न समझें। इनके हृदय की उदारता समझें। कुर्ते, काज, पजामा—सबका चौड़ा होना, उनके हृदय के चौड़ेपन का प्रतीक है!

श्रीचौबेजी उन आदमियों में हैं, जो हिन्दी की हिमायत, साहित्य के संरक्षण, कला की कुशल-क्षेम के लिए जान तक निछावर करने के लिए रस्से तुड़ाया करते हैं। कई बार चौबेजी के जी में आया है कि हिन्दी का विश्वव्यापी प्रचार कर डालें। पर सोचते-सोचते रह गये। कई बार यह चाहने की जीतोड़ कोशिश की कि ब्रजभाषा के उद्धार के लिए जान लड़ा दें, पर कुछ सोच-समझकर ही तो इरादा बदल दिया। प्रोपेगैण्डे से प्रसार, प्रसार से निर्माण और निर्माण से नाम होता है। नाम से अमरता मिलती है—इन सब बातों को चौबेजी इससे भी अधिक जानते हैं, जितना हिटलर जर्मनी के भविष्य को जानता था।

चौबेजी हिन्दी में प्रोपेगैण्डा-साहित्य के अमर स्रष्टा हैं। आर्य समाजियों की प्रचार-पुस्तकें साहित्य नहीं, वे तो साम्प्रदायिक चीज़ें हैं। असल साहित्य तो चौबेजी के प्रोपेगैण्डा लेख हैं, जिनके द्वारा वे हिन्दी के अनिच्छित लेखकों को झाड़ू मारते रहते हैं।

साहित्य के खेत में आकर कोई उच्छृंखल लेखक कला की बछिया से छेड़छाड़ न कर बैठे, इसके लिए आप सदा सतर्क रहते हैं। 'प्रोपेगैण्डा का डण्डा लिये पहलवान पण्डा की तरह आप साहित्य के खेत की मेंड़ पर खड़े पहरा देते रहते हैं। और अगर कहीं किसी बेसुद बिजार की आहट भी सुनते हैं, तो बड़ी ज़ोर से डण्डा फटकारते हैं। आप अपने

कर्तव्य पालन में हरीशचंद्र की तरह मुस्तैद हैं ; फिर भी अगर कोई साँड आँख बचा, दाव लगाकर घुस आये और गोबर कर भागे, तो चौबेजी का क्या दोष । आपने तो ईमानदारी से कला की बछिया की सतीत्व-रक्षा की, न हुई तो उसकी किस्मत ।

पं० पद्मसिंह शर्मा के स्वर्गवास के बाद आपने उनकी हिम्मत और हुकूमत का वसीयतनामा अपने नाम लिख लिया और उसी दिन से लेखकों की ख़बर लेने के लिये डण्डा भी सँभाल लिया । दो-चार लेखकों पर ही वह चलाया था कि फटेबाँस की तरह भर्र-भर्र कर उठा । झोझरा बाँस बोल गया और ढोल में पोल ढकी न रह सकी । हाँ, शर्माजी से वसीयत में आपको सिर्फ़ चाय पीने का शौक़ ही मिल सका ! यह भी कम सन्तोष की बात नहीं ! संगत का फ़ायदा तो उठा गये ।

चौबेजी भाँग नहीं पीते, फिर भी भाँग पीने वालों की-सी बातें अवश्य करते हैं । बेचारे मजबूर हैं । चौबे होकर भी भाँग पीनेवालों की-सी बातें न करें तो बिरादरी से निकाल दिये जायँ । वैसे आप भंगड़ियों से कहीं ज़्यादा बहक लेते हैं । विजया भवानी के भक्तों से भी अधिक बेपर की उड़ाना जानते हैं । आपका सिद्धान्त है—पानी में आग लगा कै, झमालो दूर खड़ी ! एक फुलझड़ी छोड़ दी और तमाशा देखते रहे !

हिन्दी में आपने ही खासलेट की घिसघिस शुरू की । हिन्दीपत्रों में खूब चखचख चली । दुलारेलाल पर एक दुलत्ती झाड़ दी, बेचारा पीठ मलता फिरा । खूब चाँय चाँय मची । पर फिर भी देव-पुरस्कार हथिया ही लिया । भले ही चौबेजी दाँत निपोरते रह गये हों । अब फिर विकेन्द्रीकरण की

फुलझड़ी छोड़ी है और चारों तरफ़ आप ही आप हो रहे हैं। कई लोग कहते हैं—यह इस तरह फुलझड़ियाँ ही छोड़ते रहते हैं या कुछ करते धरते भी हैं ? करें क्या ? वह तो विचारक हैं। दिमाग़ में कुछ सनक आई। हिन्दीवालों के सामने एक स्कीम बनाकर फेंक दी। जिसकी ग़रज़ हो करे; नहीं हो, न करे। विचारक तो विचार दे सकता है। और विशेषकर आप जैसे विचारक !

चौबेजी आदमी बड़े व्यस्त हैं। बड़े आदमी हैं। व्यस्त न हों, तो बड़े ही क्यों हों। व्यस्त न भी हों तो भी हों, तभी तो बड़े बन सकते हैं। इसीलिए न टोपी की सुध, बेचारी एक्स्ट्रा एक्ट्रेस की तरह सिर पर धरी रहती है। न कुर्ते की परवाह, कमर के ऊपर चढ़ जाय या नीचे उतर आय। न बाहों का ध्यान, चाहे कन्धों पर सरक जायँ। और तो और, यह निरीह पाजामा भी पराये पूत की तरह पैरों में पड़ा रहता है। यह सब व्यस्तता ही तो है। चाहे इसे इनका बौड़मपन समझें या एक्टिंग; पर इनकी व्यस्तता में ईमानदारी अवश्य है। यह ईमानदारी इस बात से और भी प्रकट होती है—जब कभी आपका परिचित कोई नौजवान मिल जाय और वह किसी पत्र का एडीटर भी न हो तब तो आप निश्चय ही उसे भूल जाने का स्वाभाविक पोज़ दिखायेंगे। याद दिलाने पर आप और भी बड़प्पन दिखाते हुए कहेंगे—"माफ़ करना हमकूँ कछु याद नहिं रह्यो। हाँ, कछु कछु याद तो परत है। अरे, आप जनक दुलारे या मंगलानंद !" इस डायलौग से भी आपका बड़प्पन प्रकट होगा। क्योंकि ग़लती करना और फिर माफ़ी माँगना भी बड़ों का एक काम है। इस काम को आप खूब प्रेम और लगन से करते

हैं। बड़े आदमी हैं—और बड़े होते हैं भोले, भोंदू नहीं। आप भी भोलापन प्रकट करने में कमाल करते हैं। अपनी मूर्खताएँ आप बड़े रसीले ढंग में वर्णन करते हैं। आपको सचमुच वही समझने का मन चाहता है, जो आप अपने को कहते हैं। कभी तो आप इतने सरल होते हैं कि खाना खाकर डकार लेने के बाद हाथ धोते समय तौलिया का काम धोती के छोर से लेते हैं।

हिन्दी-साहित्य में आप गाँधीजी के चरखे की तरह हैं। गाँधीजी का चरखा बरसों से चर्रक चूँ कर रहा है; लेकिन इतना सूत कातकर नहीं दे सका; जिसकी रस्सी बनाकर आजादी की टाँग बाँध इंगलैण्ड से उसे हिन्दुस्तान घसीट कर लाया जा सके। फिर भी गाँधीजी उसे उसी प्रकार कलेजे से लगाए हैं, जिस प्रकार बँदरिया अपने मरे बच्चे को लगाये रहती है। चर्खा अब भी उसी रफ़्तार से चल रहा है। चौबेजी भी उसी रफ़्तार से साहित्य-निर्माण में जुटे हैं; लेकिन अभी तक इन्होंने साहित्य के आँगन में क्या कुछ लीपा-पोती की, आपके सिवा कोई नहीं जानता।

राजनीतिक विचारों की दृष्टि से चौबे जी अराजकतावादी हैं। लेकिन मनोविज्ञान और शरीरशास्त्र के परम पंडितों और पारखी डाक्टरों ने आपको राजाश्रय में रहने की सलाह दी है। इच्छा न होते हुए भी डाक्टरों के विवश करने पर आप हवा बदलने के लिए टीकमगढ़ जा बसे हैं। जीवन भर सेवा और संघर्ष में गलाया हुआ शरीर राजवट-वृक्ष की शीतल छाया में पनपने लगा है। पहले तो आपके झंजर-पंजर ढीले हो गये थे, अब कहीं शारीरिक दृष्टि से चौबेपन की ओर चले हैं।

यह नुस्ख़ा अच्छा हाथ लग गया; वरना हिन्दी-साहित्य को न जाने क्या धक्का लगता। ख़ैर।

चौबेजी को चाय पीकर पद्मसिंह जी की आत्मा से प्रेरणा मिलती है। सिर्फ़ आधा सेर केले संतरे का नाश्ता करने से कहीं कुछ लेख लिखने लायक़ होते हैं। चौबेजी को लिखते-लिखते आजीवन अजीर्ण हो गया है। सोते समय रोज़ लाचार होकर एक सेर गर्म गर्म दूध के साथ पाव भर कलाकंद खाना पड़ता है। तब कहीं कठिनता से सुबह दस्त आता है और किसी रात को कलाकंद दानेदार न मिला, तो सुबह मुसीबत!

श्री चौबेजी एमर्सन, शा, क्रोपाटकिन के कुटीशन सुनाते हुए रोमांचित हो जाते हैं। कोई मिलने जाता है तो गौरवपूर्ण चमकती हुई आँखों से उसे गाँधीजी और एण्ड्रूज़ द्वारा लिखी हुई चिट्ठियों की फ़ाइल दिखाते हैं और स्वयं किसी से मिलने जाते हैं तो उनके संस्मरण सुनाकर गद्गद हो जाते हैं। बाक़ी चौबे जी आदमी अपने पाये के एक ही हैं।

: : विचारकजी : :

श्रीजैनेन्द्रकुमार हिन्दी-साहित्य के वर्तमान युग में बुरी तरह प्रसिद्ध हैं। अजीब आपकी शैली है और है अनोखी आपकी भाषा। निराली आपकी चेष्टाएँ हैं, विलक्षण आपकी हरकतें हैं—लेकिन केवल साहित्य में ही। घर में या बाहर आप बिल्कुल गऊ हैं। कंजूस भाषा, तुके बेतुके विचार, उलझन-भरे भाव और गोरखधंधे भरे अनुभाव, और भाव तथा अभाव के दुराव के लिए आप हिन्दी में जब-तब याद किये जाते हैं। याद ही नहीं किये जाते, आपके ज़िक्र छेड़े जाते हैं, चर्चे होते हैं, क़िस्से चलते हैं।

आप एक साहित्यिक साइंटिस्ट हैं, सुबह-शाम, बिना बुखार-जाड़े का भय माने, कला के ऑपरेटस पर अपने वैदव विचारों का एक्सपेरीमेण्ट करते रहते हैं। कला की तराजू पर अपनी साहित्यिक हरकतों को आधारहीन आत्मविश्वासी धारणाओं से तोलते रहते हैं। पलड़ा चाहे जिधर झुके, पर विश्वास यही रहता है कि सब कुछ पूरा उतरा। आपकी सांसारिक उन्नति में ही आत्मिक या मानसिक उन्नति का रहस्य छिपा है। अलीगढ ज़िले के एक छोटे क़सबे से अलीगढ़ जैसे बड़े शहर और अलीगढशहर से दिल्ली आकर बसे। इसी प्रकार कहानीकार से उपन्यासकार और उपन्यासकार से विचारक बन बैठे।

आपकी कहानियों की खूब चर्चा रही, उपन्यासों ने भी बड़ा नाम कमाया। इसके बाद एक कुदिन एक दोस्त ने आकर मुझे समाचार दिया—अरे यार ऊँघ रहे हो, बड़ी भारी दुर्घटना हो गई। जैनेन्द्रजी.....।"

"जैनेन्द्रजी.....दुर्घटना ! जैनेन्द्रजी क्या बिना टिकट रेल में सफ़र करते.....क्या साइकिल से टकरा.....इतने बड़े कलाकार.....हे परमात्मा.....यह वज्रपात !" मैं हक्का-बक्का होकर बोला।

"सुनते भी हो.....पूरा सुनो तो.....!"

"कहो भी जल्दी.....उफ़ श्री जैनेन्द्रजी...कलाकार.....!"

"जैनेन्द्रजी एक विचारक हो गये !"

"क्या पहले बिना विचारे काम करते थे ? मैं नहीं मानता। वह तो पहले से ही विचारा करते हैं। बिना विचारे कहीं कहानी उपन्यास लिखे जाते हैं ! बिना विचारे जो करे, सो पाछे पछताय !" मैंने उसकी भर्त्सना की।

"अजीब आदमी हो। माने भी समझते हो। विचारक माने दार्शनिक।" उसने समझाया।

उसी दिन से मैं जैनेन्द्रजी को दार्शनिक मानने की कोशिश करता रहा हूँ। बिना उनका दिव्य दर्शन किये मैं कैसे समझ लूँ। आख़िर एक दिन उनका दर्शन कर ही बैठा ! बहुत देर तक तो पहचान भी न सका। ओह, यह विचारक दार्शनिक ! यह कला का दीवाना—दर्वेश ! सचमुच साहित्य के लिए पागल है। कहानी लेखक और उपन्यासकार के रूप में तो जैनेन्द्रजी को जानता था ; लेकिन विचारक के रूप में जो देखा तो बहुत देर तक मेरे चश्मे ने धोखा खाया ! आख़िर पहचान ही लिया !

आप ही हैं, जो कहानी की गद्दी से उचककर विचारक के आसन पर विराजे हैं ! धन्य है, हिन्दी मैया !

कहानीकार जैनेन्द्र और विचारक जैनेन्द्र में काफ़ी अन्तर आ जाना दर्शन शास्त्र का एक ठोस नियम है। मैंने देखा—पहले युग की खस्सी छोटी-छोटी भले मानसों की जैसी मूँछें गायब हैं। गाल पटक गये हैं। आँखें संकुचित होती जा रही हैं। सिर कुछ चौड़ा-सा लगता है। कान पहले से बहुत ज़्यादा चौकन्ने हैं। क़द छोटा हो गया है और शरीर सूखता जा रहा है। हँसते हैं, तो उपहास मालूम होता है। देखते हैं, तो अधबन्द आँखों के ढक्कनों में जैसे तर्क तालाश कर रहे हों। सोचते हैं, तो ऊँघते से लगते हैं। बातें करते हैं, जैसे खो गये हों। किसी की बात ध्यान से सुनते हैं, तो भवें मिला माथे पर २०-२५ सवेंटें डालकर कह देते हैं 'हुँ ऐसा ?'

साथ में एक दोस्त था। उसने दर्शन करके पूछा—यह सब क्या ! सूखकर पुआल हुए जा रहे हैं। इनकी चेष्टाएँ भी अजीब मालूम होती हैं। ख़ूब विचारक बने। मैंने उसको समझाते हुए कहा—तुम्हारी आँखों पर अज्ञान का चश्मा चढ़ा है। तुम शरीर को देखते हो, आत्मा को नहीं पहचानते। जब से जैनेन्द्रजी दार्शनिक बने हैं, आत्मा में घुसते जा रहे हैं। आत्मा बहुत ही सूक्ष्म है। उसमें प्रवेश पाने के लिए बहुत सूक्ष्म शरीर चाहिए। तुम कोई दिन में देखोगे कि जैनेन्द्रजी आत्मा ही आत्मा रह जायँगे और अब भी शरीर में शरीर तो कम है, आत्मा बहुत ज़्यादा है। अध्यात्मवादी दार्शनिक के लिए और चाहिए ही क्या ! विचारो तो !

'एक दार्शनिक -हिन्दी में बाबू गुलाबराय थे और दूसरे हो गये जैनेन्द्र जी। अब.. हो गया उद्धार हिन्दीवालों का। अब सबको आत्म-ज्ञान हुए बिना न रहा करेगा। हर साल इन दोनों की कथा होनी चाहिए सम्मेलन के मौक़े पर।' वह मज़ाक करता हुआ बोला।

'तुम्हारा सिर! बकवासी कहीं का, मज़ाक उड़ाता है। बाबू गुलाब-राय से जैनेन्द्रजी की तुलना करता है। वह तो हैं किताबी दार्शनिक। मौलिकता बिल्कुल भी नहीं। इनकी हर हरकत मौलिक है। इनका खाँसना-छींकना, जमुहाई-उबकाई लेना, पलकें मारना, मुसकराना सभी विचारकवाद से भरे हैं।' मैंने उसे बुरी तरह डाँटा। वह ख़ामोश हो गया। हम ले आये।

हाँ तो अब जैनेन्द्र जी सरासर विचारक हैं—चालीस सेरे विचारक। दार्शनिक हैं, अब मनुष्य नहीं। आत्मा हैं—बावन तोले पाव रत्ती आत्मा ही आत्मा। आजकल आप साधारण-सी बात पर भी एक दार्शनिक की तरह ही विचार करते हैं। और किसी तरह कर ही नहीं सकते। भैंस जुगाली क्यों करती है? बकरी की 'में में'...में क्या आध्यात्म छिपा है? ऊँट की दुम छोटी और गर्दन बड़ी क्यों है? गधा क्यों रेंकता है? सियार क्यों चिल्लाते हैं? बिल्ली भौंकती क्यों नहीं? घोड़ा चिंघाड़ने में असफल क्यों है? भेड़िये के सींग क्यों ग़ायब हो गये? गूलर के फूल की सुगंधि कैसे ली जा सकती है?—इन सब बातों पर जैनेन्द्रजी दार्शनिक रूप से ही विचार करते हैं।

मान लो, आप दार्शनिक जैनेन्द्र के पास जायँ और उनसे प्रश्न करें—महाराज, अज्ञान के कारण हम तो कुछ भी जान नहीं पा रहे।

कृपा करके बताइये, भैंस जुगाली क्यों करती है? प्रश्न सुनते ही जैनेन्द्रजी अपने दार्शनिक विचारक पोज़ में बैठ, भवें चढ़ा, माथे पर सवटें डाल, खोई खोई आँखों और पागलों जैसी चेष्टा बनाकर कहेंगे—प्रश्न के अन्तर को जो मैं मानूँ, वही जानूँ। जो हाट-घाट में है, वही सर्व में। भैंस को प्रतीक समझो, तो प्रश्न की लीक पहचान लो। जुगाली में अन्त-प्रेरणा तो है ही, आत्म-ग्लानि भी रमी है और आत्म-ग्लानि मन का साबुन है। जुगाली में उसी के झाग एकत्र हैं। मन साफ़ हुआ, तो रहस्य को समझा और भैंस ने जुगाली की, आत्मा निर्मल हुई। भैंस के लिए भोजन पचाना—पर मुझे तो निर्मलता का आदर्श लगता है। यह कला की कसौटी है। ज्ञान कला में अन्तर क्या? मानव समझे तो पथ भूले। भूलकर जुगाली करे, तो मन का मैल निकाले। फिर पुतलियों से प्रकाश दूर कहाँ! अध्यात्म का रहस्य जान लिया, जीवन बंधनमुक्त। भैंस पशु होकर भी जुगाली करे, मानव ज्ञान की खान बने और मुँह देखे! फिर बंधन ढीला न हो, तो नहीं ही होगा!

भैंस की जुगाली की दार्शनिक विवेचना जैनेन्द्र जी उतनी ही सफलता और आत्म-विश्वास के साथ कर देंगे, जितनी सफलता और आत्म-विश्वास के साथ कुँजड़ी अपने बेरों को मीठा बताती है। यह तो खाने पर ही पता चलता है कि वे कितने खट्टे हैं। पर दार्शनिक के लिए खट्टा-मीठा कुछ नहीं। वहाँ तो बेर की आत्मा का स्वाद उसकी आत्मा लेती है। आत्मा के लिए न खट्टा, न मीठा। क्योंकि न मीठा, मीठा है। न खट्टा, खट्टा है। खट्टा मीठा है, मीठा खट्टा है। इस रहस्य को जैनेन्द्रजी की आत्मा ही जानती है।

जैनेन्द्रजी अब भी कभी-कभी कहानी लिखते हैं; लेकिन वह कहानी-कला को धोखा ही देना है। यानी वे कहानी भी दार्शनिकता का कचूम्बर ही होती हैं। एक तो आप पहले से ही अपनी शैली के लिए 'अजीब' नाम से प्रसिद्ध थे, इधर और भी उलझन भर गई है आपकी शैली और भाषा रचना में। आपकी शैली इतनी व्यक्तिगत है कि अगर आप किसी कार्ड पर पता भी लिखेंगे तो विशेष शैली में। आपको एक पत्र लिखना है पं० उदयशंकर भट्ट को। भट्टजी का पता है—

श्री पं० उदयशंकर भट्ट,
५ कृष्णा गली, रेलवे रोड,
लाहौर।

श्रीजैनेन्द्र जी, इसको भी किसी दूसरे ही ढंग में लिखेंगे। शायद इस प्रकार—

हाँ, सेवा में, भूलूँ न तो—
पं० उदयशंकर भट्ट ही,
रेलवे रोड, ऐसा लगता है,
३+२ कृष्णा गली—नहीं तो और क्या ?
लाहौर।
निश्चय ही—लाहौर।
[पंजाब के हृदय की सौंदर्य नगरी]

इसे कहते हैं स्टाइल ! शैली। आप कितना ही प्रयत्न करें, किसी भी प्रकार उन विचारक महाराज से सादे ढंग पर बुलवाने का, पर यह अपनी शैली में बोलने से बाज़ नहीं आयँगे। जो आदमी पता लिखने में

भी स्टाइल इस्तेमाल करता है, वह सचमुच महान् शैलीकार है। Style is the man शैली ही व्यक्तित्व है। इसका आदर्श आप हैं।

कहानी और उपन्यास लेखक के रूप में आपकी क्या क़दर हुई, यह किसी से छिपी नहीं; पर दार्शनिक बनकर आपको आपके धर्म बन्धुओं ने पहचान लिया। कहाँ छिपे थे गुदड़ी के लाल! छिपे रुस्तम। अब नहीं छोड़ेंगे—आओ बनो हमारे गुरू। अब आप दिगम्बर जैनियों के गुरू बन गये हैं। धर्म-कर्म, लेना-देना, आचार-व्यवहार, ब्याज-बट्टा सब पर आपके प्रवचन जैन-पत्रों में निकलते रहते हैं। इन प्रवचनों के लिए आपको काफी चाँदी भी भेंट की जा रही है—यह हमारे लिए तो बहुत प्रसन्नता की बात है। चाहे श्री जैनेन्द्रजी इसको विचारक के रूप में कुछ भी समझें!

: : हरफ़नमौला : :

बाबू गुलाबराय हिन्दी साहित्य में बुढ़भस सम्प्रदाय के आदरणीय आचार्य हैं। नाम आपका गुलाब है, पर व्यक्तित्व आपका कनेर और गंध आपकी गेंदा-जैसी है। गुलाब की गंध आपके बुढ़ापे को देखकर शर्माती है, गेंदे की उपयोगिता आप में हर पहलू नज़र आती है। आपको क्या करना चाहिए, वह आप कभी करते नहीं। क्या करते हैं, यह आपकी जन्मकुण्डली में कहीं दर्ज नहीं। बड़े-बड़े ज्योतिषियों को आपने धोखा दिया है। करने के लिए कुछ चले और कर कुछ और ही बैठे।

दर्शन (फ़लास्फ़ी) में एम० ए० पास किया। छतरपुर के राजा के प्राइवेट सेक्रेटरी बनकर पेंशन पाई। दर्शन पर दिल रखते हैं, पर हिन्दी प्रोफ़ेसरी के फल चखते हैं। पुराने छकड़े में मोटर के पहिए लगे हुए यान के समान आप नवीन और प्राचीन के मिश्रण हैं। बूट के ऊपर मर्दानी धोती, बन्द गले का कोट और खुले बटन—यह आपकी पोशाक है। पक्की सड़क पर चलते हैं तो लगता है कि हवा निकले ट्यूबवाली साइकिल जा रही है। बाबूजी खल्वाट खोपड़ी पर पुराने ढंग की फैल्टकैप लगाते हैं, जो बुढ़भस-सम्प्रदाय का धार्मिक चिह्न है। कभी-कभी

काले रंग की गांधीकैप पहनकर कांग्रेस का दिल भी बहला दिया करते हैं।

आपका साहित्यिक रूप "प्रिय-प्रवास" के नवें सर्ग की तरह विस्तृत और विशाल है। नवें सर्ग में व्रजमण्डल में होने, न होनेवाले सभी पेड़-पौधों का वर्णन है। व्रज में हों या न हों—'हिन्दी-शब्द-कोष' में तो हैं, फिर ग़लत क्या है! इसी प्रकार आपका साहित्यिक व्यक्तित्व किसी गाँव के बिसातख़ाने की दुकान है, जहाँ पर हल्दी धनिये से लेकर गाँव की गोरियों को रिझानेवाली बिंदिया भी मिल सकती है। बाबू गुलाबराय हिन्दी-गद्य साहित्य में हरफ़न मौला हैं। किसी भी विषय पर पुस्तक की माँग कीजिए, तुरन्त तैयार। यहाँ 'न' करना सीखा ही नहीं। क़लम दवात हो, उँगलियाँ काम दें, फिर भी इन्कार करे तो ऐसे लेखक को साहित्य का शत्रु समझना चाहिए। आप तो साहित्य का आधार इसी सिद्धान्त को मानते हैं।

अमरूद का तेज़ाब, नारंगी की चाय, तुलसीदल का हलुआ, सिरके का शर्बत, प्याज़ का इत्र, गुलाब का चूरन, फ़ालसे का पराँठा, खिन्नी का खोया, मौलसिरी का मलीदा और करौंदे का कलाकन्द बनाने के विषय से लेकर, परमात्मा की परेशानी, आत्मा की मनमानी, मोक्ष का मलीदा, जन्म का ज्वार-भाटा, कर्म की कारीगरी, आलस्य की उस्तादी, धर्म की धाँधली, दीन का दिवाला, राजनीति का रोदन और साहस का सहारा के विषय तक पर आप बिना डिक्शनरी देखे लिख सकते हैं। आप भारी-से भारी और हल्के-से-हल्के विषय पर फाउण्टेनपेन का प्रयोग बड़ी हिम्मत और उस्तादी से कर सकते हैं।

आप बहुत आसानी और मनमानी के साथ मौनसून का महत्व वर्णन कर देंगे, भूमण्डल का भ्रमण बखान देंगे, मनोविज्ञान की मरम्मत करके दिखा देंगे। विज्ञान के बारे में आपने पुस्तकें लिखी हैं। साहित्यिक होने के कारण रेडियो को रेडियम से बना बताकर विज्ञान के होश ठिकाने ला दिये। पढ़ी फ़्लॉस्फ़ी है और दम विज्ञान के ज्ञान का भरते हैं। हिन्दी पढ़ाते हैं, भूगोल-खगोल की खाल निकालकर उसमें ज्योतिष की लाश घुसेड़कर नवीन चमत्कार उत्पन्न कर सकते हैं। कहते हैं—जिन विषयों पर अधिकार न हो, जिनका ज्ञान न हो, उनमें हाथ न डालना चाहिए। ये विषय भी क्या कोई साँप की बँबी हैं; जो डंक मार देंगे। अधिकार या ज्ञान प्राप्त करके हाथ डाला तो क्या! तारीफ़ तो बिना ज्ञान और अधिकार के हाथ डालने में है। 'शायर सिंह सपूत' तो नये रास्ते ही चलते हैं। साहित्यिक शेर तो नई-नई सड़कों पर चलेगा। उन्हीं शेरों में आप भी टूटे दाँत और घिसे नाखूनवाले शेर हैं।

आपकी शैली में रीतिकाल के बुढ़ापे की नीरसता और अरहर की दाल के चोकर का सूखापन, भुस का भुरभुरापन और धान की पुआल का पोलापन है। आपका साहित्यिक सिद्धांत विलक्षण मिश्रण का एक ऐसा बेस्वाद काढ़ा है, जिसमें भक्तिकालीन कविता की छाल, रीतिकाल के साहित्य का छिलका, द्विवेदी युग के पद्य का सतगिलोय, छायावाद के शहद का पुट और प्रगतिशीलता के भोंडेपन का चिरायता मिला है। इस रूप में आप स्मार्त्त साहित्य भक्त हैं। अपने लिए सभी भले हैं। बुरा तो यह चोला है—अपने राम तो सभी को 'सियाराममय सब जग जाना' समझते हैं।

: १२३ :

हरफ़नमौला

आपका हृदय इतना दयावान है कि किसी भी सभा को निराश नहीं करते। सब में कुछ न-कुछ बकझक आयँगे। आदमी सीधे सरल हैं। कभी किसी साम्प्रदायिक सभा का सभापतित्व आपको आतुरता से स्वीकार है, तो कभी प्राइमरी क्लास की डिवेटिंग सभा की कुर्सी पर विराजते हैं। कर्त्तव्य के आप इतने पक्के हैं कि दीवार सुने या छत, कुर्सी ध्यान दे या मेज़ कान दे, श्रोता भले ही सभा से उठकर बाहर चले जायें, आप अपना भाषण दिये ही जायेंगे। भावना से कर्तव्य ऊँचा है।

एक बार आगरा कॉलिज में 'नवरस कवि सम्मेलन' हुआ। आप तो हैं ही पेटेण्ट प्रेज़ीटेण्ड। पहुँच गए धोती कमीज़ बदलकर। प्रधान पद से गद्य की शैली में बोलना प्रारम्भ किया। लड़के तो ठहरे रसिया, लगे हॉल से भागने। आपने परम सात्विक भाव से कहा—"मेरे प्यारेभाइयो, साहित्य जनो, ठहरो या भागो मुझे ३० मिनट कर्त्तव्य पालन करना है। यह तो मैं अवश्य करूँगा।" और आपने ठीक ३० मिनट अपना कर्त्तव्य पालन किया। हॉल में संयोजक, हिन्दी प्रोफ़ेसर और एक चपरासी के अतिरिक्त कोई भी उपस्थित रहा या नहीं, आप ही जानें। जिसे कर्त्तव्य पालन की इतनी धुन हो, वह भला श्रोताओं की परवाह कब करने लगा है।

आप एक सफल अध्यापक हैं; जैसा कि अभी कहा गया है। नागरी प्रचारिणी सभा, आगरा, में एक दिन आप एडवांस क्लास को पढ़ा रहे थे। दो लड़के झगड़ पड़े और झगड़ा इतना बढ़ा कि उनमें गुत्थमगुत्था हो गई। स्टूल उलट गये, शोर मच गया, अराजकता फैल गई; पर आप पढ़ाए ही गये। आख़िर एक लड़के ने बताया तो आप बड़े सस्नेह सात्विक भाव से बोले, अच्छा लड़ रहे हो? ख़ैर, बैठ जाओ! और

कहते ही मुँह से मूँगफली का दाना चू पड़ा ! मैंने एक साथी से कहा, देखा—इसलिए ध्यान नहीं दे रहे थे । एक मूँगफली का नुक़सान हो गया न ! लड़े लड़के और चोट पड़ी बाबूजी पर ।

आप हिन्दी में एकमात्र दार्शनिक हैं । आपकी दार्शनिक खोज के विषय में पाठक व्याकुल होंगे । दार्शनिक रूप में आपका इतना ही कार्य हमें मालूम हो सका है । एक बार आप आगरा-जैन-होस्टल में वार्डन के रूप में अपने कमरे में पड़े दर्शन-शास्त्र का ऑपरेशन कर रहे थे । रात के दो बजे आप हड़बड़ा कर उठे और कई लड़कों को जगाकर बोले—"देखा, स्टेशन मास्टर कितना दुष्ट है, सामने सड़क पर माल गाड़ी लाकर खड़ी कर दी है, जिससे हम लोग घबरा जाएँ । हम इन बातों में आनेवाले नहीं ।" लड़के जाग उठे, तो आपने संकेत किया—"वह देखो उसकी लाल-लाल लालटेनें चमक रही हैं ।" कई लड़के सड़क तक दौड़े आये । उन्होंने देखा, रोड-क्लोज़्ड (सड़क बन्द) के लिए लाल लालटेनें टँगी हैं ।

लिखने की शैली में शायद धोखे से कहीं फुर्ती और चुस्ती आ भी जाए, लेकिन अगर बोलने में ज़बान ज़रा भी फुर्ती या चुस्ती दिखाये, तो आप जीभ कटा दें । कण्ट्रोल इसे कहते हैं । ज़बान बोलने में कभी भी चंचलता नहीं दिखायेगी । आपके बोलने के ढंग में विशेष तरह का आलस्य रहता है । मालूम होता है वाणी उकता गई है, और टालमटोल कर रही है । फिर भी आप बोलने से घबराते नहीं, हर सभा में बोलने के लिए आपका जी मचलाया करता है । आपके बोलने से सुननेवालों का ज़ायक़ा भले बिगड़ जाए, आप बोले बिना न मानेंगे ।

आप कहेंगे—तो मँय...कहय...रहा था...मँय...मँय...हाँ...रस जो है, वह कविता मँय होता है...तो ठीक है न जो मँय नँय कहा...। तो समालोचना 'चप...चप...पिच् ..पिच्'.....समालोचना में अयसा होता है। कहते-कहते मूँगफली का रस भी लिये जायँगे।

फल खाने के आप बहुत शौक़ीन हैं और फलों में सबसे बढ़िया फल आप मूँगफली मानते हैं। मूँगफली खाने से आप बहुत से लाभ समझते हैं—आप हर पहलू साहित्यिक हैं। हर पहलू से उसको देखते हैं। मूँगफली बहुत सस्ती है, यह अर्थ शास्त्रीय दृष्टिकोण रहा। इसी में राष्ट्रीय सेवा भी छिपी है। देश का पैसा बचेगा तो देश धनी बनेगा। मूँगफली छोटे से-छोटे गाँव और बड़े से बड़े शहर में मिल सकती है—इसलिए नागा कभी नहीं हो सकती। मुँह में पड़ी रहती है, शीघ्र घुलती नहीं और चबाने की दाँतों में शक्ति नहीं, बुड्ढे जो ठहरे। मुँह में डाले रखकर यात्रा करते हुए मन लगा रहता है। मुँह में बहुत देर पड़ी रहने से मुँह में लार इकट्ठी हो जाती है और लार हाज़मे के लिए बहुत आवश्यक है—भले ही कुछ टपक भी जाए तो हानि नहीं। तो आपकी मूँगफली में अर्थशास्त्र, राष्ट्रीयता, देशभक्ति, कमख़र्ची, आयुर्वेद—सभी घुसे हुए हैं।

बहुत सी और बातें तो हैं ही; पर साहित्यसेवा आपके जीवन का मुख्य उद्देश्य और धार्मिक रहस्य है। इसीलिए आपने साहित्य की हर एक क्यारी में खुर्पी चलाई है। समझा तो यही है कि इससे बाग़ का भला होगा, पौधा हरा-भरा हो जायेगा। अगर किसी पौधे की जड़ कट गई हो तो उसमें बाबूजी का क्या दोष। उस पौधे की मौत आ गई होगी। उनकी ईमानदारी में कोई सन्देह नहीं।

बाबू गुलाबरायजी, समालोचक, अध्यापक, विचारक, फ़लासफ़र तो हैं ही, सम्पादक भी हैं और आप हिन्दी में सबसे अधिक आनरेरी यानी अवैतनिक सम्पादक हैं। यह आपकी निःस्वार्थ सेवा, त्यागभाव और लगन ही है कि इस मँहगाई और आपाधूपी के युग में भी आप सस्तेपन का आदर्श बनाये हुए हैं। सचमुच आपका उदाहरण न हो तो लोग भूल जायें कि भारतवर्ष में इतना सस्ता घी-दूध कभी बिकता रहा है जितना हम इतिहास में पढ़ते हैं।

आप सचमुच इस युद्धकाल की मँहगाई में भी हायतोबा मचाने-वालों को एक चुनौती देते हैं। आपने मँहगाई भत्ता भी ठुकरा दिया, एक सच्चे साहित्य-सेवी के लिए यह कलंक समझा। वैसे आपको संपाद-कीय कर्म से जो कुछ मिलता है, उसे भी त्याग देने पर उतारू हैं, पर मूँगफली के ख़र्च के लिए आप थोड़ा-बहुत स्वीकार कर लेते हैं। फिर भी सम्पादन-कला से आप २०-२२ से अधिक लेना प्रकाशक के भावों की हिंसा समझते हैं, और इस युग में गांधीजी की हरकतों से हिंसा करने-वाला नर्क में जाएगा। गांधीजी ने अवश्य यमराज से कोई साँठ गाँठ कर रखी है। फिर बाबूजी प्रकाशक के हृदय को दुखाकर हिंसा का पाप क्यों लें। गांधीजी को ख़ुश रखना भी तो एक कर्त्तव्य है।

काम आपने बहुत से किये हैं, लेकिन आपके जीवन की अंतिम कामना यह है कि मूँगफली पर एक थीसिस लिखकर हिन्दीवालों को चक्कर में डाल दें। उसी में नवरस, छायावाद, प्रगतिवाद, दुर्गतिवाद आदि सिद्ध करके दम लेंगे, ऐसे आपके इरादे हैं।

: : असल कम्युनिस्ट : :

यह है असल कम्युनिस्ट। देश को धता बता, विदेश का ध्यान करता है। हिन्दुस्तानी मिट्टी का अपमान कर, रूसी धरती पर अभिमान करता है। यह है ग़रीबों का पालक, अमीरों का घालक, मजूर सभाओं का संचालक, महात्मा मार्क्स का इकलौता बालक—असल कम्युनिस्ट। इसके दिल में तो लेनिन की लगन लगी है, मोलोटोव की ममता की आग जगी है। यह मार्क्स की महानता को जानता है और स्टालिन के प्रेम को पहचानता है।

भौंदू भारत हमहि न, भावै ॥

रात दिवस रूसी मैयन को हमको प्रेम सतावै।
दुनियाँ भर के मजदूरन की, यह मन लगन लगावै।
या मन में लेनिन घुसि बैठो, घुसन कोउ नहि पावै।
जिन मधुकर अम्बुज रस चाख्यो, क्यों करील फल खावै।
मार्क्स गुरू की शपथ, न हमको कजिया और सुहावै।

भौंदू भारत हमहि न भावै ॥

अन्तर्राष्ट्रीय प्रेम के इस परवाने से आप भारत की बातें करते हैं। जिसकी रग-रग में दुनिया-भर के मजूरों की मुहब्बत की आग जल रही

है, उससे हिन्दुस्तान की आज़ादी की बातें करके उसको पथ-भ्रष्ट करना चाहते हैं ? जिसके दिमाग़ में दुनिया घूम रही है, उसे देश के संकुचित अनुदार दायरे में सीमित कर कुएँ का मेंढक बनाना चाहते हैं ? वह तो असीम आसमान का कौआ है। वह अन्तर्राष्ट्रीय प्रेम की काँय-काँय करता रहता है ! जो विश्व के स्नेह की शराब पी चुका है, जो रूसी नशे का दीवाना है, उसे भारत-भक्ति की भाँग पिलाकर उसका ज़ायक़ा बिगाड़ना चाहते हैं ? यह न होगा। वह विचारक है, निरा बुद्धू नहीं है। उसकी खोपड़ी में भुस नहीं भरा है, अक्ल भरी है।

कम्युनिस्ट से ही आप नाराज़ क्यों हैं ? आपके जवाहरलाल भी तो 'अन्तर्राष्ट्रीय-अन्तर्राष्ट्रीय' चिल्लाया करते हैं। वह भी तो चीन की चर्चा करते हैं, रूस की रट लगाते हैं, जापान को जली-कटी सुनाते हैं, जर्मनी को ज़ालिम बताते हैं। अगर कहो कि पहले वह देश की बात करते हैं, फिर विदेश की चर्चा चलाते हैं, तो कम्युनिस्ट को कहना पड़ेगा कि जवाहरलाल पुराने हो चले। गाँधीजी की संगति ने उनको ख़राब कर दिया, वरना वह भी मेरी तरह विदेश के राग गाते और फूले नहीं समाते। फिर भी वह समय की चाल को, मेरे बराबर तो नहीं, कुछ कुछ समझते अवश्य हैं।

कम्युनिस्ट की अन्तर्राष्ट्रीय सनक में ही भारत की आज़ादी छिपी है। उसकी कोशिश से, मान लो, दुनिया भर में क्रांति हो जाय, मान क्यों लो, क्रान्ति होकर रहेगी। क्रान्ति होने पर मंजूरों का राज्य होगा। इंग-लैण्ड के मजूर भारत को तुरंत आज़ाद कर देंगे। और अगर न भी किया, और उनको हम पर राज करने की ज़रूरत बनी रही, तो भी कोई अन्तर नहीं। मजूर मजूर सब एक ! कम्युनिस्ट पर कम्युनिस्ट का राज्य

क्या ! वसुधैव कुटुम्बकम् ! हम उनको ग़ैर समझेंगे ही क्यों ? हम उनके, वे हमारे ! हम पर हमारा ही शासन । कम्युनिस्टों की फ़लासफ़ी को बुद्धू भारतीय समझते ही नहीं । किस भोंदू देश में पैदा हो गया । कम्युनिस्ट पुनर्जन्म को नहीं मानता, वरना अगले जन्म में स्टालिनग्राड में पैदा होता ।

यह असल कम्युनिस्ट तो जनता के लिए लड़ता है । और जनता तो ज़्यादातर रूस में ही रहती है । इसीलिये जब तक रूस लड़ाई में नहीं कूदा, तब तक युद्ध साम्राज्यवादियों का युद्ध रहा ! इंगलैण्ड साम्राज्यवादी है ही । तब तक इंगलैण्ड की सहायता पाप । रूस युद्ध में फँसा तो युद्ध तुरन्त लोक-युद्ध बन गया । जनता की लड़ाई हो गई । रूस जनता है, जनता रूस है । इस फ़लासफ़ी को जब तक न समझोगे, तब तक समझ में नहीं आयगा, कि कम्युनिस्टों ने युद्ध में अंग्रेज़ों का ढोल पीट-पीटकर उनका समर्थन क्यों किया । रूस युद्ध में फँसा—अँग्रेज़ों से मिला, अँग्रेज़ों की साम्राज्यवादी भावना छूमन्तर । भला रूस के सामने उनकी वह नापाक भावना ठहर सकती है । रूस की शक्ल देखकर साम्राज्यवाद की भावना ऐसे भागती है, जैसे मार के सामने भूत !

काँग्रेस का विरोध भी असल कम्युनिस्ट ने इसीलिये किया, कि जनता के युद्ध में उसने अँग्रेज़ों का साथ नहीं दिया ! जनता के युद्ध का काँग्रेस साथ न दे, समर्थन न करे, फिर भी कम्युनिस्ट चुप बैठ जाय, तो लेनिन को जाकर क्या मुँह दिखायगा । कम्युनिस्ट सब कुछ सह लेता, पर जनता के युद्ध का विरोध नहीं सह सकता । काँग्रेस क्या, चाहे मार्क्स भी ऐसा करे, तो भी कम्युनिस्ट के मुँह से गालियाँ

ही खायगा। काँग्रेस को भी मालूम हो गया होगा कि किन मुडचिरों से पाला पड गया।

कम्युनिस्ट संसार का सबसे बड़ा समझदार राजनीतिज्ञ जानवर है। इसकी पालिसी को काँग्रेस क्या समझेगी! काँग्रेसी जेल में जा घुसे—इसके ज़िम्मेदार तो कम्युनिस्ट नहीं। उनकी बात मानते, तो सरकार से फ़ायदा उठा लेते! पर बुड्ढे काँग्रेसी इन मौक़ों को क्या समझें। युद्ध काल में कंगाल भी धनी बन जाते हैं! ठेकेदारों ने लाखों बनाए, कपड़े वालों ने ४ के २४ किए, काग़ज़ियों ने ख़ूब चाँदी समेटी। भला कम्युनिस्ट ऐसा मौक़ा चूक जाय, उसने भी सरकार से चाँदी बना ली। अँग्रेज़ों का समर्थन किया, उसका लाभ उठाया। यह तो लेना देना है।

कितने ही आदमी, आश्चर्य तो यह है कि अक़्लवाले भी, कहते हैं कि कम्युनिस्टों ने अपने को बेच दिया, रिश्वत खा गये, पैसे के लिये काँग्रेस को कोसा! पर कम्युनिस्टों की तरह लोग अक़्ल तो रखते नहीं, उनकी नीति को समझते नहीं। अक़्ल तो इसका नाम है कि दुश्मन के शस्त्र से उसका ही नाश किया जाय। ऐसा पेंच मारे कि दुश्मन अपनी ही ताकत के धक्के से ख़ुद ही चारों खाने चित्त गिरे! यही तो कम्युनिस्टों ने किया।

कम्युनिस्ट साम्राज्यवाद का शत्रु तो है ही। रूस का साथ छूटते ही अँग्रेज़ फिर साम्राज्यवादी बन जायेंगे। जब तक रूस उनके साथ है, तभी तक वे साम्राज्यवादी नहीं! कम्युनिस्ट साम्राज्यवाद का विनाश किये बिना न मानेगा। इसके लिये चाहिये क्रान्ति। क्रान्ति के लिये चाहिये प्रचार। और प्रचार के लिये चाहिये पैसा! और वह पैसा अगर उसी से

मिल जाय, जिसकी जड़ खोदनी है, तब तो एक पंथ दो काज। उन्हीं से पैसा लिया, और उनकी ही जड़ में मट्ठा डालने के लिए। वह लगे रहे युद्ध में, इधर जनाब "लोकयुद्ध" के १०-१० भाषाओं में एडीशन निकाले, खूब प्रचार कर लिया। क्रान्ति के लिये सब तैयार! अब करें या न करें क्रान्ति, यह जनता की खुशी! कम्युनिस्ट तो अपना कर्त्तव्य पालन करने से बाज़ न आया।

अंग्रेज़ों से पैसा लेने में एक और रहस्य भी है। भारी राजनीति है। चाणक्य भी सिर पीट लेगा, सुनकर। अंग्रेज़ों से पैसा लिया। अपने काम में खर्च किया। उनके विरुद्ध उन्हीं का धन लगाया। साथ ही पैसा उनकी गाँठ से निकला, तो वे ग़रीब हुए। ग़रीब हुए तो बिना पैसे क्रान्ति के तूफ़ान का मुक़ाबला करना असम्भव है। एक बात और भी हो सकती है। ग़रीब होने पर वे भी मजूर हो जायेंगे और कम्युनिस्टों में आ मिलेंगे। फिर साम्राज्यवादी बने रहने का ख़तरा ही सदा के लिये टल जायगा। देखा, अंग्रेज़ से पैसा लेने में कितनी अक्ल भरी राजनीति काम कर रही है। अगर जवाहरलाल एक बार भी इन बारीकियों पर ठण्डे दिल से विचार करते तो कम्युनिस्टों को कांग्रेस से न निकालते, बल्कि उनके हाथ में कांग्रेस की बागडोर सौंप देते।

असल कम्युनिस्ट तो कांग्रेस के दरवाज़े की तरफ़ भी नहीं झाँक सकता। कांग्रेस उसको क्या निकालेगी, वह खुद ही कांग्रेस को मुँह दिखाना अपना अपमान समझता है। कांग्रेस उसको एक आँख भी नहीं भा सकती। कांग्रेसियों से कम्युनिस्ट सदा जलता है। कम्युनिस्ट तो अंग्रेज़ी सरकार की मदद का बीड़ा उठाये, और ये कांग्रेसी सरकार

से कहें—हिन्दुस्तान ख़ाली करो। जिसे कम्युनिस्ट प्यार करें, उसी से कांग्रेस तकरार करे। कांग्रेस की सब बातें कम्युनिस्टों के कलेजों में तीर की तरह खटक रही हैं। इनकी इन्हीं बातों से कम्युनिस्टों के हृदयों में घाव हो रहे हैं। आज भी जबकि जनता का युद्ध बन्द हो गया, कलेजों के घावों से मवाद बहता रहता है। टीस उठती रहती है।

चाहिये तो यह था कि कांग्रेसवाले कम्युनिस्टों से माफ़ी माँगते और उनको खिला-पिलाकर राज़ी करते, उनका पूजा-सत्कार करते, लगे ऊपर से उनको कांग्रेस से निकालने। और साहब, साफ़ बात यह है कि असल कम्युनिस्ट तो कांग्रेस में रह ही नहीं सकता। उसे तो पहले ही कांग्रेस के घर से बोरिया-बधना उठाकर आ जाना चाहिये था। ख़ैर अब कांग्रेस ने जले पर नमक लगा दिया। सच्चा कम्युनिस्ट तो अब मुस्लिम लीग के छुरके में ही चैन पा सकता है। कम्युनिस्ट भी कांग्रेस की नस पहचानता है। उसका जवाब तो मुस्लिम लीग है। वही इसके तीरों के सामने ढाल बन सकती है। इसीलिए धर्म और ईश्वर की नाक में नकेल डालनेवाले कम्युनिस्ट अब ख़ुदा और ईमानपरस्त मुस्लिम लीग के इशारे पर नाच दिखायेंगे।

असल कम्युनिस्ट तो क्रान्ति चाहता है। और मुस्लिम लीग सच-मुच क्रान्ति किये बिना चैन न लेगी। क्रान्ति के लिये ही तो वह पाकिस्तान की माँग करती है। क्रान्ति के लिए तो लीग के पेट में रात-दिन दर्द उठता रहता है। हिन्दुस्तान में रहेगी तो कांग्रेस क्रांति न करने देगी। पाकिस्तान परदे की हवेली बन जायगा। और लीग तथा

उसके चे गोद लिये लड़के कम्युनिस्ट अपनी पर्दे की हवेली में मनचाही क्रान्ति करते रहेंगे। कोई रोकने की हिम्मत तो करे!

वही असल कम्युनिस्ट है, जो देश की परम्पराओं में दियासलाई लगाता है, धर्म की धज्जियाँ उड़ाता है, देश को धता बताता है, विदेशों के गीत गाता है। मुस्लिम लीग की मुहब्बत में मस्ती से झूमता है और गोरी सरकार के चरण चूमता है। कांग्रेस को गालियाँ सुनाता है!—बहुत से लोग ऐसा कहते हैं। लेकिन कहनेवाले अगर इनका मूल्य समझें, तो वे भी कम्युनिस्ट बन जाँय।

कितने ही आदमी तो कम्युनिस्टों के व्यक्तिगत जीवन की भी आलोचना करने बैठ जाते हैं। कम्युनिस्ट तीन-तीन डब्बे तो सिगरेट फूँक डालते हैं, विदेशी शराब पीते हैं, चरित्र की तनिक भी परवा नहीं। गोल्डफ़्लेक के तीन-चार बक्स फूँके बिना क्या ख़ाक अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति समझ में आये। फ्रेञ्च रम या इंगलिश ह्वाइट हॉर्स चढ़ाये बिना कोई भी विश्व-क्रान्ति की कल्पना भी नहीं कर सकता। और क्रान्ति-कारियों के लिये चरित्र! तब तो हो चुकी संसार-व्यापी मजूर क्रान्ति! मैं कहता हूँ, बेचारा कम्युनिस्ट अगर सिगरेट के धुएँ में कुछ देर अपने को न भुला दे तो उसे आत्महत्या करनी पड़े। इतना फ़िक्र रहता है, जनता की उन्नति का! कम्युनिस्ट मजूरों के ग़म में घुला जाता है। अगर थोड़ी-सी पीकर वह ग़म ग़लत कर लेता है, तो किसी निगोड़े का क्या बिगाड़ता है।

अंतिम बात कहकर ख़त्म करता हूँ। एक दिन मैं अपने एक मित्र के साथ चर्चगेट से सान्ताक्रुज़ आ रहा था। रास्ते में किसी कम्युनिस्ट

से भेंट हो गई। आप "फ्रैण्डस् ऑफ़ सोवियट यूनियन" के कर्ता-धर्ता मालूम होते थे। नये में गुच्च ! रिवोलूशन पर ख़ूंब बहस हुई ! पुराने दक़ियानूसी विचारों की छीछालेदर की गई। मठ-मंदिरों की नींव खोद डाली गई। ईश्वर की ख़बर ली गई। जर्मनी-जापान की क़ब्र पर हथौड़े लगाए गये। कांग्रेस की नीति पर हँसिया चलाया गया। उनके चले जाने के बाद मेरे दोस्त बोले—यह साहब तो बुरी तरह पिये हुये थे। मैंने उत्तर दिया—तो क्या आप बिना पिये सोवियट यूनियन से दोस्ती क़ायम रखना चाहते हैं ?

: : श्रीमती सलवार : :

पंजाबी युवतियों की शान, युवकों की गौरव-गुमान, सरदारों की प्यारी, सरदारनियों की दुलारी, हिंदुओं की हिम्मत, मुसलमानों की मुहब्बत—मैं हूँ, पंजाब की महारानी। बंगाली शौक़ीन लड़कियाँ मेरे लिए ललचाती, यू० पी० वालियाँ मुझे पाकर फूली नहीं समातीं और दक्षिणी देवियाँ तो मेरी मान-मर्यादा देखकर आश्चर्य में पड़ जाती हैं। मैं हूँ पंजाब की महारानी और मेरा नाम है—सुकुमारी सलवार।

जन्मस्थान और तिथियों की मुझे याद नहीं। हाँ, बहुत दिमाग़ी कोशिश करने पर ध्यान आता है कि १३वीं शताब्दी में मेरा जन्म हुआ। मेरी माता एक पठानी और पिता एक वीर पंजाबी थे। माता एक काफ़िले के साथ क़ाबुल-क़न्धार से ख़ैबर की घाटी में होकर आई थी। यहाँ आकर उसका प्रेम एक पंजाबी से हो गया और प्रेम के फल-स्वरूप मेरा जन्म हुआ। जन्म के समय पिताजी कुछ उदास हुए और ज्योतिषियों को बुलाकर मेरी जन्मपत्री बनवाई। ज्योतिषियों ने पिताजी को ढाढ़स देते हुए कहा—"ओ पले लोकाँ, तेरे भाग्ग खुल गये। एह कुड़ी बड़ी भाग्गवान जम्मी अ। इसके जन्म के समय कुछ अनोखे ग्रहों का जोग है। शकुन्तला के समान—बल्कि उससे भी अच्छे नक्षत्र पड़े

हैं। यह तेरा नाम अमर कर देगी; पंजाब की महारानी कहलायगी। यह तो न लड़की है, न लड़का; यह तो औतार है औतार।"

बड़े प्यार-दुलार से मेरा पालन-पोषण किया गया। अम्मां मेरी सौ-सौ बलाएँ लेतीं और पिताजी मुझे चूम-चूमकर पागल हो जाते। पिताजी के सामने ही मेरी चर्चा पंजाब भर में फैल गई और माता-पिता घर-घर मेरी चर्चा सुन, सुख की साँस ले, स्वर्ग सिधारे।

गुरु नानक के पन्थ की तरह जगह-जगह मेरा प्रचार हो गया। जवानी भरते-भरते मैं पंजाब की महारानी बन गई। सिक्खों ने मुझे अपनाया, मुसलमानों ने मुझे ताज पहनाया और हिन्दुओं ने अक्षत-रोली से मुझे राजतिलक चढ़ाया। सोलहवीं शताब्दी तक मैं सबके दिल पर राज करने लगी। पंजाब ही नहीं, मैंने तमाम हिन्दुस्तान पर राज किया है—मुग़लानियाँ मुझे पाकर आगरा के लाल क़िले में तितली-सी फुदकती फिरी हैं। लखनऊ की नवाबिनियाँ मुझे अपनाकर नज़ाक़त की पुतलियाँ बन, अपने बादशाहों—नवाबों—के दिल पर राज करती रही हैं। दक्षिण में मेरा दबदबा रहा है—उत्तर में मेरी उँगली के इशारे पर तलवारें चमकी हैं। पुरानी बातें बहुत हैं—लम्बी कहानियाँ हैं। उन्हें ज़्यादा न दुहराऊँगी।

मेरा नाम सलवार है। भाषा-शास्त्र मेरे विषय में चुप है। चुप भी क्यों न हो! उसमें इतनी शक्ति कहाँ, जो मेरे बारे में कुछ बोल सके।

हाँ, वैयाकरण मेरे विषय में इतना ही कह सकता है। व्याकरण की दृष्टि से, सलवार—जातिवाचक संज्ञा, ऊपर से एकवचन, नीचे से बहुवचन। कभी कभी स्त्री लिंग और कभी-कभी पुल्लिंग। न स्त्री लिंग,

न पुल्लिंग। कोई पुराना खूँसट लकीर का फ़क़ीर धर्मशास्त्री मेरे विषय में कह सकता है—न हिन्दू, न मुसलमान, न सिख, न क्रिस्तान। न इसका कोई धर्म, न ईमान। लेकिन जो समझदार और नई रोशनी का जानकार होगा, वह मुझे विश्वधर्म की नायिका, कास्मोपोलिटन पंथ की संचालिका और प्रेम की पालिका कहकर सिर झुकाएगा। ख़ैर, कोई कुछ भी कहे, मैं जो हूँ—वह हूँ। मैं क्या हूँ—सब कुछ हूँ।

प्रेम-लोक की मैं रानी हूँ। प्रेम के लिए मैं कभी-कभी पागल हो जाती हूँ, और यहाँ तक कि अपने को सँभाल भी नहीं पाती। आत्म-समर्पण के लिए आकुल-व्याकुल हो सब कुछ भूल जाती हूँ। चुनाब नदी के किनारे, जहाँ पानी की बूँदें प्रेम की मदिरा बनकर बरसती हैं—जहाँ मुहब्बत का नशा हवा में मिलकर कितने ही हृदयों को बेबस कर देता है, मेरा जन्म हुआ, और प्रेम के फलस्वरूप ही। पर यह न समझा जाय कि सदा मुझे हार ही माननी पड़ती है। कभी-कभी मैं कितने ही दिलों को कुचलती हुई मुस्करा कर चली जाती हूँ। कभी-कभी कितने ही अल्हड़ युवकों के आतुर अरमानों के फूलों में आग लगाकर मुझे आनन्द मिलता है। मैं अनेक पागल भावुक लोगों की जवानी का रस चूसकर उनको एक तरफ फेंक देती हूँ। कोई भी मेरे इरादों में बाधा नहीं डाल सकता। मैं स्वतन्त्र हूँ, स्वच्छन्द हूँ, अपनी अभिलाषाओं की स्वामिनी हूँ।

जैसा कि ऊपर कहा गया है—मैं न हिन्दू हूँ, न मुसलमान, न सिख, न क्रिस्तान और सब कुछ हूँ। मस्जिद में मैं नमाज़ पढ़ती हूँ, मन्दिर में घण्टे बजाती हूँ और गुरुद्वारों में 'जपजी' का पाठ करती हूँ।

आर्यसमाज में भी मैं पहुँचती हूँ और वेदमन्तर की रट लगाती हूँ—ओं भुर भवै सवै.....। एकमात्र मैं ही यह ताक़त रखती हूँ जो सब जातियों को एक कर दे। गाँधीजी अगर चाहते हैं कि हिन्दू मुसलमान, सिख-ईसाई सब एक हो जाँय तो मुझसे सलाह लें। मैं कहती हूँ, मुझे अपनाएँ। गाँधी टोपी सब नहीं लगाते। कितने कांग्रेसी मुसलमान भी इससे बचते हैं। पर मैं सब जगह अपनाई जाती हूँ। कट्टर से कट्टर मुसलमान और कट्टर से कट्टर हिन्दू मेरी पूजा करता है। मैं ही देश भर को एकता के सूत्र में बाँध सकती हूँ। गाँधीजी अगर देश का भला चाहते हैं तो सलवार पहनें और तमाम देशवासियों को पहनने की आज्ञा करें, तभी भला हो सकता है।

न केवल हिन्दु और मुसलमानों की ही साम्प्रदायिक समस्या मैं सुलझाती हूँ, साम्यवाद का प्रचार भी मैं कर रही हूँ। सर सिकन्दर भी मुझे अपने महल में जगह देता है और छुट्टन धुना भी मुझे अपनी झोंपड़ी की रानी समझता है। गाँव की ऊँची-नीची गलियों में मैं कन्डे बीनती फिरती हूँ, और लाहौर के सिनेमा घरों के बाक्सों में भी मैं अँधेरे में मुस्करा कर अँगड़ाइयाँ लिया करती हूँ। स्टुडियों में भी मैं प्रेम का अभिनय किया करती हूँ और पूजा-घरों में भी मीरा के पद गाया करती हूँ।

और इतना ही क्यों ?—स्त्री पुरुष की नीच-ऊँच की भावना की समस्या भी मैंने हल कर दी है। मैं न स्त्रीलिंग—न पुल्लिंग। औरत मुझे धारण कर ले तो मैं सुकमारी सलवार सेठी, श्रीमती सलवार कौर या सलवार बेगम शाहनवाज़। पुरुष धारण कर ले तो श्रीमान्

सलवार स्वरूप शर्मा या सरदार सलवारसिंह, या सय्यद सलवार हुसैन शेरवानी। स्त्रियों को अपटूडेट रखने के लिए तो मैं सबसे ज़्यादा मददगार हूँ। खेल-कूद—दौड़-धूप में साड़ी बिल्कुल आड़ी आती है; लेकिन सलवार उनकी दिक़तों का मैदान साफ़ कर देती है। जनाब, मैंने पंजाब में हिन्दुस्तान की इज़्ज़त रख ली है—वरना यहाँ की औरतें साया में ही दीखतीं, या पतलून पहनकर पुरुषों को उन्नति की दौड़ में पछाड़ देतीं।

सुकुमारी छबीलियों की मैं शान हूँ। माल रोड पर जाइये—आप देखेंगे, सीने का उभार उकसाते हुए, दिल की धड़कन तेज़ करते हुए चुस्त कमीज़, हवा से खेलती हुई राहगीरों के दिलों को डसती हुई नागिन-सी काली-काली घुँघराली अलकें, गले में पड़ी हुई कलफदार मसली हुई चुन्नी, गर्व से भवें ताने और सुकुमार हाथों की दृढ़ता से हैंडिल पकड़े, कितनी ही कोमल मृदुल गात कुमारियाँ जल्दी-जल्दी पैडल मारती हुई, लेडी साइकिल पर सवार, पास होकर सर्र से निकल जाती हैं। साथ में मैं होती हूँ, रंग-बिरंगे रूप में, उन कुमारियों की पिंडलियों को गुदगुदाती हुई। तभी तो इतनी अकड़ है, तेज़ी है, शोखी है और है नशीले जीवन की मस्ती! आप हक्के-बक्के रह जाते हैं—ओह! जैसे बादल, आँधी, बिजली और इन्द्रधनुष सब एक साथ कहीं चढ़ाई करने जा रहे हों।

जब कभी मैं अनारकली में सरसर करती दूकानों को लाल पीले रंगों से चौंकाती हुई निकलती हूँ—चारों तरफ़ ताज्जुब के कान खड़े हो जाते हैं, चहल-पहल की चाल ढीली पड़ जाती है, और सैलानियों की चंचल पुतलियाँ चौकड़ी भूल जाती हैं। जब मैं काले बुर्के से

शर्मीली आँखों से देखती हूँ—कितने ही दिलों पर बिजली गिर जाती है। देखनेवाले आह भरकर—दिल थामकर रह जाते हैं।

यही नहीं—मैं वीरों की दिलेरी और जवानों की अकड़ हूँ। लम्बा-सा एक नौजवान, तना हुआ बदन, उठा सीना, चमकता हुआ पौलिश किया बूट, सिर पर कलफदार साफा और सिर के ऊपर उठा हुआ डेढ़ फिट ऊँचा उचकता हुआ साफे का एक छोर—कितनी शान है! क्यों?—साथ में मैं जो होती हूँ। धुली साफ़ लट्ठे की सलवार सर सर फरफर करती हुई सड़क के अरमानों को कुचलकर निकल जाती है। मैं हूँ सलवार, बूढ़ों की जवानी, जवानों की अकड़।

मैं अफ़रीका में जाकर लड़ती हूँ, सिंगापुर में मैंने अपने पैर जमा रखे हैं। ईराक में, फिलीस्तीन में मैंने पंजाब की शान बढ़ाई है। मैं हूँ जो फ़ौज को अपने नादान जवानों से भर देती हूँ, मैं हूँ जो पंजाब को अपनी प्यारी सरकार के लिए मरने को तैयार करती हूँ।

मैं क्या हूँ—मैं हूँ पंजाब की महारानी श्रीमती सलवार।

: : भविष्य का स्वप्न : :

मैं सच कहता हूँ—आपको अविश्वास करने का कोई कारण न होना चाहिए। मैं अपनी श्रीमतीजी को जी-जान से प्यार करूँगा। मैं क्या कोई नई बात करूँगा, सभी समझदार पति अपनी श्रीमतियों को प्यार करते हैं। लोग तो बुढ़ापे तक प्यार करना नहीं छोड़ते—फिर मेरी 'वह' तो नवविवाहिता होंगी और हज़ारों में एक—मेरी हैसियत से कई गज़ ज़्यादा सुन्दर। सुकुमार, होशियार, बेअख़्तियार, खुदमुख़्तार—चाहे जैसी भी 'वह' हों, मैं अवश्य ही उनको दिल के कोने-कोने से प्यार करूँगा। कितने ही लोग विवाह कर बैठते हैं, प्यार करना नहीं जानते या उनके अक़्ल के सूराख इतने संकुचित होते हैं कि समझदारी के कीड़े उनमें घुस नहीं पाते। ख़ैर!

विवाह होने से पूर्व ही मैं शृंगार-सजावट की सामग्री से अपना खास कमरा लबालब भर दूँगा। भाई, न जाने क्या मौक़ा है—आजकल तेल-फुलेल, बनाव-सिंगार, सजावट-मुसकराहट का युग है—इसलिए विवाह से पूर्व ही सब सामान एकत्र कर लेना चाहिए। पाउडर के लिए एक गाड़ी खरिया मिट्टी या सेलखड़ी, लिपस्टिक के लिए दो बोरी बढ़िया लाल गेरू, सिर में डालने के लिए चार कनस्तर नारियल का तेल,

साड़ी-वाडिस आदि पर छिड़कने के वास्ते दो बोतल इत्र, वेणी गूँथने के लिए रामबाँस की बढ़िया चिकनी और बारीक डोरी आदि 'उन जनाब' के घर में कदम रखने से ठीक १५ दिन १३ घण्टे ५८ मिनट ५६ सेकिण्ड पहले यह सब आवश्यक सामान सजा-सजाया 'विलास-भवन' में शोभा दे रहा होगा।

आप लोग कहेंगे, पाउडर-लिपस्टिक, सेंट आदि क्यों नहीं मँगाऊँगा। भाई साहब, हमने 'स्वदेशी-खरीदो' पर कई लैकचर सुने हैं। हम अपना पैसा विदेश भेजें—नारायण! नारायण! और फिर दूसरों के हाथ का तैयार किया गया सामान भेंट करने में प्यार क्या खाक हुआ। मैं तो सारा सामान अपने हाथ से तैयार करूँगा। विवाह से एक सप्ताह पहले सेलखड़ी और खरिया-मिट्टी को चक्की में बिल्कुल महीन पीसकर रख लूँगा। एक भी मोटा दाना या कण न रहेगा। मैं कोई पागल थोड़े ही हूँ कि मोटा या दरदरा पाउडर लगाकर अपनी हमारी, अपने हृदय की रानी, 'उनको' कष्ट पहुँचाऊँ। गेरू पीसकर उसे मूँगफली के तेल में मिलाकर लिपस्टिक तैयार करूँगा। रामबाँस की बढ़िया रस्सी भी खुद बटूँगा। अपनी प्यारी की वेणी के लिए।

मेरा विवाह हो जायगा। प्रथम मिलन होगा। वह शरमाती, लजाती शिथिल पैरों और उत्सुक हृदय से मुसकाती हुई मेरे कमरे में प्रवेश करेंगी। मैं धड़कते दिल से उनकी राह देख रहा होऊँगा। उन्हें आते देख, मेरा दिल सीने से बाहर कुलाचें मारने पर उतारू हो जायगा। आख़िर वह आ ही जायँगी। और कुछ मीठी छेड़ छाड़ के बाद उनका घूँघट खुलेगा और अगर वह काली हुईं तो मैं कहूँगा—

"मेरे जीवन-गगन की श्याम घटा, ओ मेरी अमावस, आह मेरी पावस—मेरी रानी।" और अगर वह गोरी हुई—जैसी कि कल्पना किये बैठा हूँ—तो मैं उनसे कहूँगा—"ओह मेरी बिजली, मेरी शुतरमुर्ग की पूँछ; मेरी नीलगाय की दुम, मेरी अंडे की सफ़ेदी, तुम मेरी रानी!" वह ज़रा नख़रा करके कहेंगी—"चलो रहने भी दो, हमें न छेड़ो—तुम बड़े कोई वह हो।"

कुछ दिन बाद हम दोनों घुलमिल जायँगे और कभी-कभी हमारी अनबन भी हुआ करेगी। किसी दिन देर से घर आने पर वह मान में मुँह फुलाए बैठी राह देखा करेंगी और जब मैं घर में आऊँगा तो देखा बिना देखा किये वह एक तरफ़ को मुँह फेर लेंगी। तब मैं उनसे कहूँगा—"रानी"। वह फिर भी न बोलेंगी तो उनके पास जाकर मैं उन्हें सम्बोधित करूँगा और जब मान से उनका मुँह फूला हुआ देखूँगा तो घबरा कर पूछूँगा—"रानी, मुँह इतना सूज क्यों रहा है? अरे क्या, ततैयों ने काट लिया? हाय! मेरी रानी इतनी सूजन! चलो, तुम्हें अभी किसी अनाड़ी हकीम के पास ले चलूँ!" आख़िर यह मान, यह नख़रा बहुत देर न चलेगा। क्योंकि वह भी तो मुझे हज़ार जान से प्यार करती होंगी।

किसी दिन वह सिनेमा जाने की ज़रूर हठ किया करेंगी। मैं उनको खूब सजाकर, उनके मुँह पर पाउडर पोतकर (जैसे दिवाली पर चूना फिरवाया हो) ओठों पर लिपस्टिक का लेप करके, उन्हें सिनेमा ले जाऊँगा। उनके पैरों में पालिश की हुई बढ़िया सैंडिल होंगी और शान से अकड़ते हुए हम दोनों प्रेमी पति-पत्नी सिनेमा जाया करेंगे। मैं उनको सबसे अगली सीट पर सिनेमा दिखाया करूँगा। उनका दिल

जो रखना हुआ और जनाब, प्यार में तो यह सब-कुछ करना ही पड़ता है।

अगर मेरी श्रीमती जी 'विराट काय' हुईं, तो भी उस ब्रह्मा को लाख-लाख धन्यवाद। सैर को जाते समय अगर उनका स्थूल शरीर कठिनता से खिचड़ता हुआ दीखा करेगा तो मैं बड़े प्रेम से उन्हें सम्बोधन करके कहा करूँगा, "रानी, तुम सचमुच, गजगामिनी हो। तुमने कवियों की उपमा की लाज रख ली। सचमुच, तुम्हारा स्थूल शरीर सड़क पर सरकता हुआ प्राणों में नशा भर देता है। गेंडा-रेंगनी, ज़रा जल्दी चलो, कहीं चुङ्गीवाले टैक्स न लगा दें। महिष-मूर्ति, तुम मेरी रानी।" वह दृश्य कितना सुन्दर होगा, जब हम दोनों नवदम्पति ठल्ली सड़क पर सैर को जाया करेंगे।

और अगर मेरी रानी पतली, दुबली, कृपकाय, आधुनिक नारी की तरह नाज़ुक और हल्की हुईं तो मैं अपने सारे अरमान ओठों पर एकत्र कर, सारा स्नेह जीभ पर चिपड़, सारा प्रेम पुतलियों में झलका कर उनसे कहा करूँगा—"इतना तेज़ न चलो, ओ हमली की पत्ती। ज़रा धीरे-धीरे, मेरी आकड़े की रुई! कहीं उड़ न जाना, ओह! नाज़ुक तितली! लो उँगली पकड़ लो न।" ये दृश्य मेरे जीवन के ऐतिहासिक दृश्य होंगे। मेरे दोस्त लोग मेरे भाग्य को सराहा करेंगे और कितने ही जला भी करेंगे। हमारा प्यार बढ़ता ही जायगा। मैं तो उसे बस प्यार ही प्यार करूँगा।

हाँ, अक्ल के कोल्हू कई ज्योतिषियों ने मेरे कुछ ऐसे गिरह बताए हैं कि विवाह जल्दी ही होनेवाला है और मेरी श्रीमती जी आबनूसी

रंग की होंगी। अगर ऐसा हुआ तो मैं सेलखड़ी और खरिया-मिट्टी की 'सोल एजेन्सी' ले लूँगा। "घर की मुर्ग़ी दाल बराबर"—चाहे जितना पाउडर बनाओ और मुँह की चार दीवारी पोतते रहो। और साहब, घर में सदा स्टाक तो रहेगा, न जाने कब 'पेटीकोट सरकार" का हुक्म हो जाय कि सखी-सहेलियों में जाना है—सेर भर पाउडर चाहिए। होगा तो दे देंगे, वरना प्यार में बट्टा लग जायगा।

एक बात और—हमारे लड़का हो या लड़की, कोई बालक ज़रूर जन्म लेगा—कोई सन्तान ज़रूर होगी। हमें अपने परिश्रम और ईमानदारी पर पक्का भरोसा है। कोशिश करने से सब कुछ होता है। कभी हमारी श्रीमती जी और कभी मैं खुद उसको खेलाया करेंगे। कभी-कभी यह भी हुआ करेगा कि वह जनाब, बालक को मुझ पर छोड़कर आप सखियों के यहाँ मनोरंजन करने के लिए जाने को तैयार हुआ करेंगी और मैं घर रहने से इन्कार किया करूँगा तो वह रोब जमाकर भी कह सकती हैं—"आप से ज़रा किसी काम को कहा तो बहाने निकालने लगते हैं। बैठे रहिये। खेलाइये मुन्ने को। तुम्हारा बालक है—इसको पालो-पोसो भी, तो।"

इस पर मैं मुसकरा कर बालक को खेलाते हुए कहूँगा, "रानी, ग़लती तो तुम्हारी भी है—"

वह मुसका दिया करेंगी और मैं जीवन के पुराने दिन उनकी छोटी-छोटी आँखों में देखने का प्रयत्न किया करूँगा।

: : मूँछों की मरम्मत : :

मूँछ-दाढ़ी बूढ़े ब्रह्मा की नासमझी का सबसे बड़ा नमूना है। किसी समय इनकी आवश्यकता रही हो या न रही हो, पर आजकल तो ये बिल्कुल बेकार-सी चीज़ हैं। दाढ़ी से, कुछ ऋषि-मुनियों को छोड़कर, सभी भारत-वासियों ने सृष्टि के बचपन में ही छुटकारा पा लिया था, पर मूँछ समाज में ज्यों-की-त्यों अपने पैर जमाए रहीं। कुछ लोगों ने इन से भी छुट्टी ले ली थी या उनको मूँछें निकली ही नहीं—कुछ इसी प्रकार की बात समझिए।

हाँ, मूँछ का अर्थ है, जो मुँह पर ही छाई रहें या मुँहछाया—मुँह पर छाया करनेवाली। यदि अर्थ सही है तो भी इनसे लाभ क्या? गर्मी में केवल मुँह को ही छाया नहीं चाहिए, बल्कि तमाम शरीर को चाहिए और आजकल तो छतरी भी बनने लगी हैं। मूँछें कितनी बेकार और वाहियात हैं—क्या कोई सोच सकता है। इसके अतिरिक्त ये होती भी कितने ही प्रकार की हैं। हिसाब लगाया जाय तो गणित की भी अक्ल गुम हो जाती है। कोई-कोई मूँछ खस्सी—उजड़ी खेती के समान। कोई झुलसी हुई झाड़ियों की तरह—जैसे लंका में आग लगते समय इन मूँछों के मालिक फायर ब्रिगेट में कमाण्डर हों। कोई

मूँछ सेई के काँटों की तरह फैली हुई, तो कोई चूहों के रोंगटों की तरह तितर-बितर। कोई शेर की पूँछ के समान तनी हुई तो कोई नीलगाय की दुम की चँमर के समान फूली-फूली। इसके कितने प्रकार गिनाए जायँ। कल्पना थककर बैठ रहती है।

मुँह सुन्दर उपवन है। जहाँ नयनों के कमल खिलते हैं, पुतलियों के खंजन चंचल रहते हैं, अधरों के पल्लव मुसकराते हैं, मुस्कान का परिमल उड़ता है, अलकों के अलि मस्त होकर हवा से खेलते हैं। सच-मुच, ऐसे सौंदर्य-स्थान पर मूँछें लोमड़ी की दुम के समान सारी शोभा बिगाड़ देती हैं। शोभा की बात भी चाहे जाने दें। उपयोगिता की बात ही लीजिए। दूध पीजिए। बेईमान महाराजिन (खाना पकाने-वाली) की तरह सारी मलाई ये मूँछें बीच ही में रोक लेंगी और छान-छूनकर दूध को मुँह-मालिक के अन्दर पहुँचने देंगी। काली-काली मुँछें और सफ़ेद मलाई का पलस्तर! क्या कलापूर्ण शक्ल निकलती है, मुछन्दर मियाँ की!

प्रेम के मामले में तो ये कमबख़्त चीन की दीवार बनकर खड़ी हो जाती हैं। किसी सुकुमारी सुन्दरी को अपनी मुसकान से रिझाने का प्रयत्न कीजिये। बारीक ओठों से कोमल-कोमल मीठे-मीठे प्यारे-प्यारे शब्द रपटने दीजिए, परन्तु सब व्यर्थ! ये मूँछें आपकी मुसकान की झलक भी उस सुकुमारी की पलकों तक न पहुँचने देंगी। बढ़िया से बढ़िया शब्द इनकी झाड़ियों में उलझकर दम तोड़ देंगे और आप देखेंगे कि वह सुकुमारी आपकी तरफ उपेक्षा की दृष्टि फेंकती हुई, सदा के लिए आपको निराश कर, आपकी मूँछों को मूर्खता की निशानी समझ

अपना रास्ता लेगी। और यदि किसी से धोखे में प्रेम हो भी जाय तो ये मूँछें प्यार के बीच में ऐसी आड़ी आयेंगी कि कुछ कहने की बात नहीं।

मुझे तो भारतीयों की नासमझी पर तरस आता है। आख़िर, इनको सूझा क्या कि इनका इतना चलन कर दिया। सौंदर्य की दृष्टि से यह बेकार, उपयोगिता की दृष्टि से व्यर्थ। धर्म-शास्त्र इनके विरुद्ध और इतिहास में खोजने पर भी इनका पता नहीं। इतिहास की बात लीजिए, मेरा तात्पर्य आर्य महापुरुषों से है। आर्यों में जितने वीर और आदर्श पुरुष हुए हैं, किसी ने भी इन मूँछों का बवाल नहीं पाला। राम इनके जंजाल में नहीं फँसे। कृष्ण इनके जाल से सदा दूर रहे। परशुराम की मूँछों का इतिहास में नाम नहीं और हनुमान के चाहे पूँछ भले ही हो—पर मूँछें नहीं थीं। बुद्धदेव ने कब मूँछें रखी थीं? शंकराचार्य इनको धता बता चुके थे और वर्तमान युग के महर्षि स्वामी दयानंद के पास इनका पता तक नहीं था।

ब्रह्मा, विष्णु, महेश—तीन देवता हैं। यह तो निश्चय है कि विष्णु और महेश मूँछें नहीं रखते थे। ब्रह्मा के दाढ़ी भी थी और मूँछें भी। इन मूँछ-दाढ़ी का ही नतीजा था कि इनकी कहीं पूजा नहीं हुई। शैव और वैष्णव भारतवर्ष में फैले हुए हैं। पर कौन कह सकता है कि एक भी ब्राह्म (ब्रह्मा का भक्त) पृथ्वी-तल पर है। और सच पूछो तो इसी चिढ़ के मारे ब्रह्मा ने हमारे भी दाढ़ी-मूँछें बना दी हैं। स्वयं तो बूढ़े बाबा को मुसीबत पड़ी ही थी, दुनियावालों को भी यह अभिशाप दे डाला। ख़ैर, बाबा, तुम चाहे अपनी दाढ़ी-मूँछ प्रेम से पाले जाओ, हम तो इन पर उस्तरा चलवाकर ही दम लेंगे।

धर्म-शास्त्र की बात लीजिए। मूँछें निकलने का कोई संस्कार सोलह संस्कारों में नहीं है। हाँ, मूँछें मुड़वाने का—संन्यास-संस्कार—अवश्य है। वेदों को देखिए। कहीं भी वेद में मूँछों की बात नहीं पाई जाती। मैं भी कुछ दिन आर्यसमाजी रहा हूँ और सन्ध्या मुझे ज़बानी याद थी। "ओम् वाक् वाक्। ओम् प्राणः प्राणः। ओम् चक्षुः चक्षुः।" आदि तो आते हैं पर "ओम् मुच्छः मुच्छः ओम् दाढ़ीः दाढ़ीः।" कभी नहीं सुना गया। "ओम् बाहुमें बलमस्तु, कर्णयोर्मे श्रोतमस्तु," तो आता है पर 'मुच्छयोर्मे शोभास्तु" आदि नहीं आता। सन्ध्या करते समय "ओम् शन्नो देवी रविष्टये" आदि पढ़कर चोटी में गाँठ लगाई जाती है, पर मैंने कोई मंत्र ऐसा नहीं देखा कि उसे पढ़कर मूँछों पर ताव दिया जाता हो या दाढ़ी फटकारी जाती हो। इसका अर्थ स्पष्ट है कि धर्म में मूँछों को कोई स्थान नहीं। हाँ, मुच्छमुंडन अपना विशेष स्थान रखता है।

आधुनिकता के लिए तो मूँछें बला ही हैं—पूरी आफ़त हैं। यदि संसार के साथ चलना है, तो इन मूँछों की मुसीबत को दूर कीजिए—मूँछें रखने से दिल की कोमलता भी तो जाती रहती है। हिटलर मूँछें रखता है—कितना ज़ुल्म कर रहा है। चर्चिल मूँछें नहीं रखता—कितना दयालु है कि बेचारा संसार भर की स्वाधीनता के लिए जान जोखम में डाल रहा है।

राष्ट्रीयता के रास्ते में भी ये बड़ी भारी रुकावट हैं। एक तो मूँछें रखने से लीडरी नहीं मिलती। जब लीडरी ही नहीं मिलेगी, तो फिर देश सेवा क्या ख़ाक कर सकोगे? जो देश सेवक मूँछें रखकर देश की

सेवा करते हैं, वे इतनी सेवा कहाँ कर पाते हैं, जितनी मुछमुण्ड लीडर। जवाहरलाल, सुभाष, जयप्रकाशनारायण, टी० प्रकाशम्, राजगोपालाचार्य, सहजानन्द—सभी तो इस बवाल को दूर भगा चुके हैं।

मूँछों के कारण साम्प्रदायिकता भी फैलती है। हिन्दू-मूँछ और मुसलिम मूँछ में भी बड़ा भेद है। मोटे तौर पर इतना ही कहा जा सकता है कि मुसलिम मूँछ खेत के किनारे मेड़ पर लगे हुये सन के पेड़ों की पंक्ति की तरह होती है और हिन्दू-मूँछ रामगंगा की रेती में खड़े झाऊ के झाड़ के समान। इसके अतिरिक्त दोनों ही जातियों में मूँछों के अनेक सम्प्रदाय हैं। आर्य-समाजी मूँछें बहुत छोटी-छोटी खस्सी (मशीन फिरी हुई दूब के समान) होती हैं और सनातनधर्मी मूँछें लापरवाही से उगे हुए धान के पौधों के समान। इसी प्रकार मुसलमानों में भी मूँछों के कई भाग हैं। ओठों के ऊपर पतली हलकी और दोनों सिरों पर लम्बी-लम्बी मूँछें सूफियाना या ज़्यादा धार्मिक समझी जाती हैं। और ओठ के किनारे एक-एक या दो-दो बालों की बाढ़ तथा दोनों सिरों पर—चार-चार छै-छै बालों वाली मूँछें मुरादाबाद के जुलाहों की पहिचान हैं। इस सम्प्रदायवाद का अन्त करने के लिये—राष्ट्रीयता के प्रचार के लिये—एकता के लिये—हमें मूँछें कटानी ही पड़ेंगी।

स्त्री-पुरुष के मनमुटाव का एक कारण मूँछ भी हैं। नारी-स्वातन्त्र्य-आन्दोलन आज कल ज़ोरों पर है। पुरुषों के समान दर्जा वे चाहती हैं। पुरुष उनको अपने से छोटा समझता है, क्योंकि उसके मूँछें हैं। यदि ये मुड़ा दी जायँ तो दोनों बराबर। और जिन लोगों ने मूछें मुड़ा दी हैं, उनसे स्त्रियाँ बड़ी प्रसन्न हैं। फिर दोनों में अन्तर ही क्या रह गया! हम

अपने समान नारी को बनाने के लिए, उसके मूँछें तो लगा नहीं सकते, उसके समान बनने के लिए, मुड़ा अवश्य सकते हैं।

मूँछों से झगड़ा ही बढ़ता है—अशांति ही उत्पन्न होती है। ज़रा कोई बात हुई तो, मूँछों पर ताव देकर एक वीर पुंगव पुरुष दूसरे से कहता है—'तुझे न समझा तो मेरा भी नाम नहीं।' या बात बात पर बड़े अभिमान से पुरुष एक-दूसरे को नीचा दिखाने के लिये क़सम खाया करते हैं—'अगर तुझे भी वह चोट न पहुँचाई, तो मूँछें मुड़ा दूँगा!' जब मूँछें पहिले ही से साफ़ हैं तो ताव किन पर दिया जाय और मुड़ाने की क़सम किसकी खाई जाय। न रहेगा बाँस, न बजेगी बाँसुरी। उदाहरण के रूप में राजपूत-काल मूँछ-महिमा का युग समझना चाहिये। बात-बात पर मूँछों पर ताव दिया जाता था और मूँछ मुड़ाने की क़समें खाई जाती थीं। तभी वे सब आपस में लड़ मरे। मूँछें रह गईं—अपना सब कुछ गवाँ बैठे। मूँछें इतिहास, धर्मशास्त्र, देशभक्ति, राष्ट्रीयता, साम्प्रदायिक एकता—सभी की दृष्टि से व्यर्थ हैं और कला की तो ये पक्की शत्रु हैं। उपयोगिता के रास्ते में भयंकर रोड़ा हैं। क्या अब भी आपकी समझ में नहीं आया कि इनको कटा देना चाहिये। यदि आप अब भी इनको नहीं साफ़ कराते, तो मैं कहूँगा कि इस नासमझी का कारण आपके मुँह पर मूँछों का होना ही है।